संक्षिप्त रामायण



राष्ट्रीय शिक्षा-नीति-198
(नया पाठ्यक्रम)
सर्व शिक्षा अभियान कार्यक्रम, लक्ष्य समूह के बच्चों में
पाठ्य-पुस्तकों का निःशुल्क वितरण
क्रय-विक्रय दण्डनीय अपराध।

संक्षिप्त रामायण

(वाल्मीकि कृत रामायण पर आधारित)

छठी कक्षा के लिए हिन्दी की पूरक पाठ्यपुस्तक

ब्रजभूषण लाल शर्मा



बिहार स्टेट टेक्स्टबुक पब्लिशिंग कॉरपोरेशन लि०

निदेशक (प्राथमिक शिक्षा), सेकेण्डरी, प्राथमिक एवं वयस्क शिक्षा, विभाग, बिहार सरकार द्वारा स्वीकृत।

सर्व शिक्षा अभियान कार्यक्रम, लक्ष्य समूह के बच्चों में पाठ्य-पुस्तकों का निःशुल्क वितरण
क्रय-विक्रय दण्डनीय अपराध

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के सौजन्य से संपूर्ण बिहार राज्य के लिए स्वीकृत

सर्व-शिक्षा अभियान - 2002-1,57,905

बिहार स्टेट टेक्स्टबुक पब्लिशिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड, पाठ्य-पुस्तक भवन बुद्धमार्ग, पटना-1, द्वारा प्रकाशित तथा बिहार ऑफसेट, जामुनगली, पटना 4 1,00000 प्रतियाँ मुद्रित।

प्रस्तावना

राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1986 के लागू होने के साथ ही ऐसी शिक्षण सामग्री की आवश्यकता का अनुभव किया जाने लगा जो इस नई शिक्षा नीति के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक हो। इस नीति के अनुसार शिक्षा बाल-केन्द्रित होगी और बच्चों के सर्वांगीण विकास पर ध्यान दिया जाएगा। नई शिक्षा नीति में भारत के राष्ट्रीय जीवन के लिए आवश्यक कुछ महत्वपूर्ण मूल्यों को "केन्द्रित शिक्षाक्रम" के रूप में स्थान दिया गया है। इस दूरगामी शिक्षा नीति के द्वारा भारत के नव-निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान मिलने की पूरी संभावनाएँ हैं।

मातृभाषा की शिक्षा के द्वारा उपर्युक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए संक्षिप्त रामायण तैयार की गई है। इसकी प्रमुख विशेषताएँ निम्नांकित हैं:

1. यह पुस्तक वाल्मीकि रामायण के आधार पर लिखी गई है। इसका मुख्य उद्देश्य बच्चों को इसके माध्यम से प्राचीन भारतीय संस्कृति के उदात्त जीवन-मूल्यों एवं प्राचीन भारतीय साहित्य से परिचित कराना एवं उनके प्रति बच्चों के मन में अनुराग उत्पन्न करना है।
2. सह पाठ्य-पुस्तक के रूप में संक्षिप्त रामायण का चयन इस उद्देश्य से किया है कि छात्रों को अपनी संस्कृति का ज्ञान, जीवन मूल्यों के प्रति आस्था और राजा-प्रजा, पिता, पुत्र, पत्नी, मित्र, माता, भाई, गुरु, शिष्य आदि के उत्तम एवं आदर्श स्वरूप का आभास तथा कर्त्तव्यपरायणता के प्रति लगाव और प्रेरणा प्राप्त होती रहे। इस पुस्तक के अध्ययन से आशा है कि छात्रों में पाठ्येतर पुस्तकों को पढ़ने की रुचि जाग्रत होगी तथा पुस्तकालय से सम्बंधित विषय की पुस्तकों को भी पढ़ने की अभिलाषा बढ़ेगी।

3. वर्णन क्रम में मर्मस्पर्शी भावपूर्ण स्थलों को उभारा गया है और उन प्रसंगों पर बल दिया गया है जिनसे राष्ट्रीय चेतना जागती है, उदात्त भावनाओं का विकास होता है और चरित्र-निर्माण में सहायता मिलती है।
4. पुस्तक के अंत में कंठाग्र करने के लिए कुछ अर्थ सहित मूल श्लोक दिए गए हैं। ये श्लोक सत्य, उत्साह, मित्रता, स्वजन आदि का व्यावहारिक जीवन में स्थान एवं तत्संबंधी मूल्यों के विषय में हैं। साथ ही पात्रों का परिचय भी इस उद्देश्य से जोड़ा गया है कि कथा को समझने में सहायता मिले।
5. प्रत्येक कांड के अंत में प्रश्न दिए गए हैं। इन प्रश्नों से एक ओर कथा-सूत्र ग्रहण करने में सहायता मिलेगी और दूसरी ओर भावपूर्ण स्थलों और वांछित मूल्यों की ओर ध्यान आकर्षित होगा। अंत में सम्पूर्ण पुस्तक पर आधारित प्रश्न इस उद्देश्य से दिए गए हैं कि पूरी कथा का प्रत्यास्मरण हो जाए।

पुस्तक की रचना राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के तत्वावधान में भली प्रकार जाँच एवं मूल्यांकन के उपरान्त की गई है। शिक्षा निदेशालय, इस पुस्तक की रचना तथा प्रशासन को इसको मूल रूप में मुद्रण करने की अनुमति के लिए परिषद् का आभारी है।

आशा है कि पुस्तक विद्यार्थियों की ज्ञान-वृद्धि में उपयोगी सिद्ध होगी।

प्रबंध निदेशक
बिहार स्टेट टेक्स्टबुक पब्लिशिंग कारपोरेशन लि०

विषय-सूची

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः

मा निषाद प्रतिष्ठं त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत् क्रौंच-मिथुनादेकमवधीः काम-मोहितम्।।

आदिकवि वाल्मीकि के मुख से अनायास निकला हुआ यह पहला श्लोक है। इसी श्लोक से उन्हें रामायण महाकाव्य लिखने की प्रेरणा मिली।

एक दिन दोपहर के समय महर्षि वाल्मीकि तमसा नदी के किनारे प्रकृति की सुंदरता का आनंद ले रहे थे। बसंत उतर रहा था। पेड़ों की छाया सुखद लगने लगी थी। वन, पर्वत सब हरे-भरे थे। तमसा मंद गति से बह रही थी। नदी का जल निर्मल था। उसमें तैरती हुई मछलियाँ चमक रहीं थीं और नदी तल भी साफ दिखाई दे रहा था। हरे-भरे वन में भाँति-भाँति के पक्षी कलरव कर रहे थे। नदी के किनारे लंबी चोंचवाले चटकीले रंग के पक्षी एक पाँत में ध्यान लगाए बैठे थे। उनमें से कभी कोई तेज़ी से उड़ता और तीर की तरह पानी में चोंच डूबोकर कुछ पकड़कर ले जाता।

नदी तट की शोभा को देखकर महर्षि वाल्मीकि के मन में अपार हर्ष था। सहसा उनके कान में क्रौंच पक्षी की सुरीली ध्वनि पड़ी। आँख उठाई तो देखा कि क्रौंच पक्षी का एक जोड़ा नदी तट पर कल्लोल कर रहा है। क्रौंच कभी चोंच से चोंच मिलाते, कभी अपनी लंबी गर्दन साथी की गर्दन में लपेट देते और कभी चोंच से एक दूसरे की पीठ सहलाते। कभी थोड़ा-सा उड़कर वे इधर-उधर बैठ जाते और फिर

पास आकर खेलने लगते। महर्षि वाल्मीकि को ये क्रौंच बड़े प्यारे लग रहे थे।

इतने में नर क्रौंच को निषाद का तीर कहीं से आकर लगा और वह गिरकर छटपटाने लगा। पति की यह दशा देखकर क्रौंची बड़े करुण स्वर में रोने लगी। क्रौंच-मिथुन की यह दशा देखकर ऋषि का हृदय करुणा से भर गया। वे शोक-सागर में डूब गए। उनके हृदय की करुणा एक श्लोक में फूट पड़ी।

"मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत् क्रौंच-मिथुनादेकमवधीः काम-मोहितम्।।"

(हे निषाद! तू बहुत दिन तक प्रतिष्ठित न रह सकेगा, क्योंकि तूने क्रौंच के जोड़े में से प्रेममग्न नर पक्षी को मार डाला है।)



बड़ी देर तक वाल्मीकि शोक के कारण बेसुध-से रहे। जब वे स्थिरचित्त हुए, तब अपने प्रिय शिष्य भरद्वाज से बोले, "भरद्वाज, मेरे शोक-पीड़ित हृदय से वीणा की लय में गाने योग्य चार पदों और समान अक्षरों का यह वचन अनायास ही निकला है। मेरा मन कह रहा है कि अवश्य ही यह प्रसिद्ध होगा।" भरद्वाज ने यह श्लोक कंठाग्र कर लिया और गुरु को सुनाया। इसे सुनकर वाल्मीकि बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने स्नान किया और वल्कल वस्त्र पहनकर शिष्य के साथ वे अपने आश्रम को चल दिए।

मार्ग में भी वाल्मीकि 'मा निषाद' गुनगुनाते चले जाते थे। उनका ध्यान श्लोक के अर्थ पर गया। अर्थबोध से उनको बड़ा दुख हुआ। वे सोचने लगे कि मैंने व्यर्थ ही निषाद को इतना कठोर शाप दे दिया। इसी चिन्ता में मग्न वे चले जा रहे थे कि उनको नारद जी की वाणी याद पड़ी। एक बार नारद जी से उन्होंने पूछा था, "हे देवर्षि! मुझे किसी ऐसे पुरुष का नाम बताइए जो गुणवान, बलवान और धर्मात्मा हो, जो सत्य पर दृढ़ रहता हो, अपने वचन का पक्का हो, सबका हित करने वाला हो, विद्वान हो और जिससे बढ़कर सुंदर कोई दूसरा न हो।" नारद जी ने कहा था कि ऐसे एक ही पुरुष को मैं जानता हूँ। वे इक्ष्वाकु वंश के राजा दशरथ के पुत्र राम हैं। वे सब तरह से गुणवान और रूपवान हैं और जब क्रोध करते हैं तब डर के मारे देवता और दानव भी काँप उठते हैं।

वाल्मीकि को ये सब बातें याद पड़ीं और रामायण की जो कथा नारद जी ने संक्षेप में सुनाई थी वह भी उनको याद आई। यह भी याद आया कि देवर्षि नारद देवलोक को आकाश मार्ग से किस अद्भुत गति से चले गए थे।

जब महाराज रामचंद्र की कथा वे मन में दोहराने लगे तो सहसा 'मा निषाद' श्लोक का एक दूसरा अर्थ उनके मन में आया– हे माधव रामचंद्र! तू अनेक वर्ष तक राज करेगा, क्योंकि तूने मंदोदरी-रावण जोड़े में से कामपीड़ित रावण को मार डाला है। यह अर्थ मन में आते ही उनकी चिंता मिट गई। परंतु 'मा निषाद' श्लोक उनके मन से नहीं निकला। वे उसे प्राय: गुनगुनाते रहते।

एक दिन वाल्मीकि जब ध्यान में बैठे हुए 'मा निषाद' गुनगुना रहे थे, सृष्टि के रचयिता ब्रह्माजी ने उनको दर्शन दिए। ब्रह्माजी बोले, "ऋषिवर, मेरी ही इच्छा से यह वाणी अनायास आपके मुँह से निकली है और श्लोक के रूप में इसलिए निकली है कि आप अनुष्टुप छंदों में महाराज रामचंद्र के संपूर्ण चरित्र का वर्णन कीजिए। श्रीराम की कथा संक्षेप में आप नारद जी से सुन ही चुके हैं। मेरे आशीर्वाद से राम, लक्ष्मण, सीता और राक्षसों का गुप्त अथवा प्रत्यक्ष सब वृत्तांत आपकी आँखों के सामने आ जाएगा, जो आगे होगा वह भी दिखाई पड़ेगा। अत: जो आप लिखेंगे, वह यथार्थ और सत्य होगा। इस प्रकार आपकी लिखी हुई रामायण इस लोक में अमर हो जाएगी।"

इतना कहकर ब्रह्माजी अंतर्धान हो गए। वाल्मीकि श्लोकों में श्रीराम के चरित्र का वर्णन करने लगे। सब श्लोक मधुर और सुंदर



थे। उनका अर्थ समझने में भी कोई कठिनाई नहीं होती थी। उनके सामने राम, लक्ष्मण, सीता, दशरथ और दशरथ की रानियों का हँसना-बोलना, चलना-फिरना प्रत्यक्ष हो गया और वे बिना रुके रामायण की कथा लिखते रहे। चौबीस हजार श्लोकों में उन्होंने पूरी रामायण लिख डाली।

—•—

1. आदि-कांड

राम-जन्म

त्रेता युग की बात है। सरयू नदी के किनारे कौसल नाम का एक प्रसिद्ध राज्य था, जहाँ अज के पुत्र राजा दशरथ राज करते थे। अयोध्या उस राज्य की राजधानी थी। यह नगरी बारह योजन लंबी और तीन योजन चौड़ी थी। नगर के चारों ओर ऊँची और चौड़ी दीवारें थीं और उसके बाहर गहरी खाई। दीवार पर सैकड़ों शतघ्नियाँ (तोपें) रखी थीं। सहस्रों सैनिक और महारथी नगर की रक्षा में तत्पर रहते थे।

नगर के बीचोंबीच राजमहल था। राजमहल से आठ सड़कें बराबर दूरी पर परकोटे तक जाती थीं। नगर में अनेक उद्यान, सरोवर और क्रीड़ा-गृह थे। ऊँची-ऊँची अट्टालिकाएँ थीं, जिनमें विद्वान, शूरवीर, कलाकार, कारीगर और व्यापारी रहते थे। घर-घर में लक्ष्मी का निवास था। बाज़ार अच्छी-से-अच्छी वस्तुओं से भरे रहते थे। नगर के लोग स्वस्थ और सदाचारी थे। कुल-मर्यादा के अनुसार सभी अपने धर्म का पालन करते थे। सभी जगह शांति, पवित्रता और एकता का वास था।

राजा दशरथ बड़े प्रतापी और सदाचारी थे। सगर, रघु, दिलीप आदि अपने पूर्वजों की तरह उनका भी यश चारों ओर फैला हुआ था। आठ सुयोग्य मंत्रियों की सहायता से वे राज-काज चलाते थे। इन मंत्रियों में सुमंत मुख्य थे। मंत्रियों के अतिरिक्त वशिष्ठ, वामदेव, जाबालि आदि राज-पुरोहित भी राजा को परामर्श देते थे। इनकी सहायता से राजा सदा प्रजा-हित के कार्यों में लगे रहते थे।

राजा दशरथ ने बहुत दिन तक राज-सुख का भोग किया, उन्हें धन, मान, यश किसी की कमी न थी, पर उन्हें एक दुःख था। उनके कोई संतान न थी। जीवन उन्हें सूना-सा लगता था। उनकी रानियाँ—कौशल्या, सुमित्रा और कैकेयी भी इस कारण दुःखी रहती थीं।

राजा ने इस विषय में अपने मंत्रियों और पुरोहित से बात की। सबकी सलाह से यह निश्चय हुआ कि पुत्रेष्टि यज्ञ किया जाए। सुमंत ने प्रस्ताव किया कि महान् तपस्वी ऋष्यश्रृंग को यज्ञ का आचार्य बनाया जाए। यह राय सबको पसंद आई।

यज्ञ की तैयारियाँ होने लगीं। राजा दशरथ स्वयं ऋष्यश्रृंग को बुलाने गए। सब राजाओं को निमंत्रण दिया गया। मिथिला के राजा भी यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए आए। अनेक ऋषि-मुनि भी आमंत्रित होकर आए। सरयू नदी के किनारे यज्ञशाला का निर्माण हुआ। ऋष्यश्रृंग ने शुभ मुहूर्त में यज्ञ प्रारंभ किया। यज्ञ का घोड़ा छोड़ा गया। एक वर्ष बाद जब घोड़ा लौटकर आया तब बड़ी रानी कौशल्या ने उसका तिलक किया। अब वेद-मंत्रों की मंगल-ध्वनि यज्ञशाला में गूँज उठी। अग्नि में आहुतियाँ पड़ने लगीं। राजा दशरथ ने जब अंतिम आहुति डाली, तो अग्निदेव स्वयं सोने के पात्र में खीर लेकर उनके सामने प्रकट हो गए।

ऋष्यश्रृंग ने अग्निदेव से खीर का पात्र ले लिया और राजा दशरथ को देकर कहा कि यह खीर पुत्रदायक है। अपनी रानियों को इसका सेवन कराइए। खीर लेकर राजा ने उसे सिर से लगा लिया। उन्होंने खीर का पात्र कौशल्या को देकर कहा कि तुम सब इसे बाँट लो। कौशल्या ने आधी खीर अपने लिए रख ली, शेष आधी सुमित्रा को दे दी। सुमित्रा ने उस आधे भाग का आधा अपने लिए रखकर शेष



सृंगी रिषिहि बसिष्ठ बोलावा, पुत्रकाम सुभ जग्य करावा।
भगति सहित मुनि आहुति दीन्हें, प्रगटे अगिनि चरू कर लीन्हें।

कैकेयी को दे दिया। कैकेयी ने उसमें से आधी खीर स्वयं ले ली और आधी सुमित्रा को ही लौटा दी।

समय आने पर चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की नवमी को बड़ी रानी कौशल्या के गर्भ से श्रीराम ने जन्म लिया। इस तिथि पर हम आज भी रामनवमी का पर्व मनाते हैं। मँझली रानी सुमित्रा के दो पुत्र हुए—लक्ष्मण और शत्रुघ्न। कैकेयी के एक पुत्र हुआ। उसका नाम भरत रखा गया।

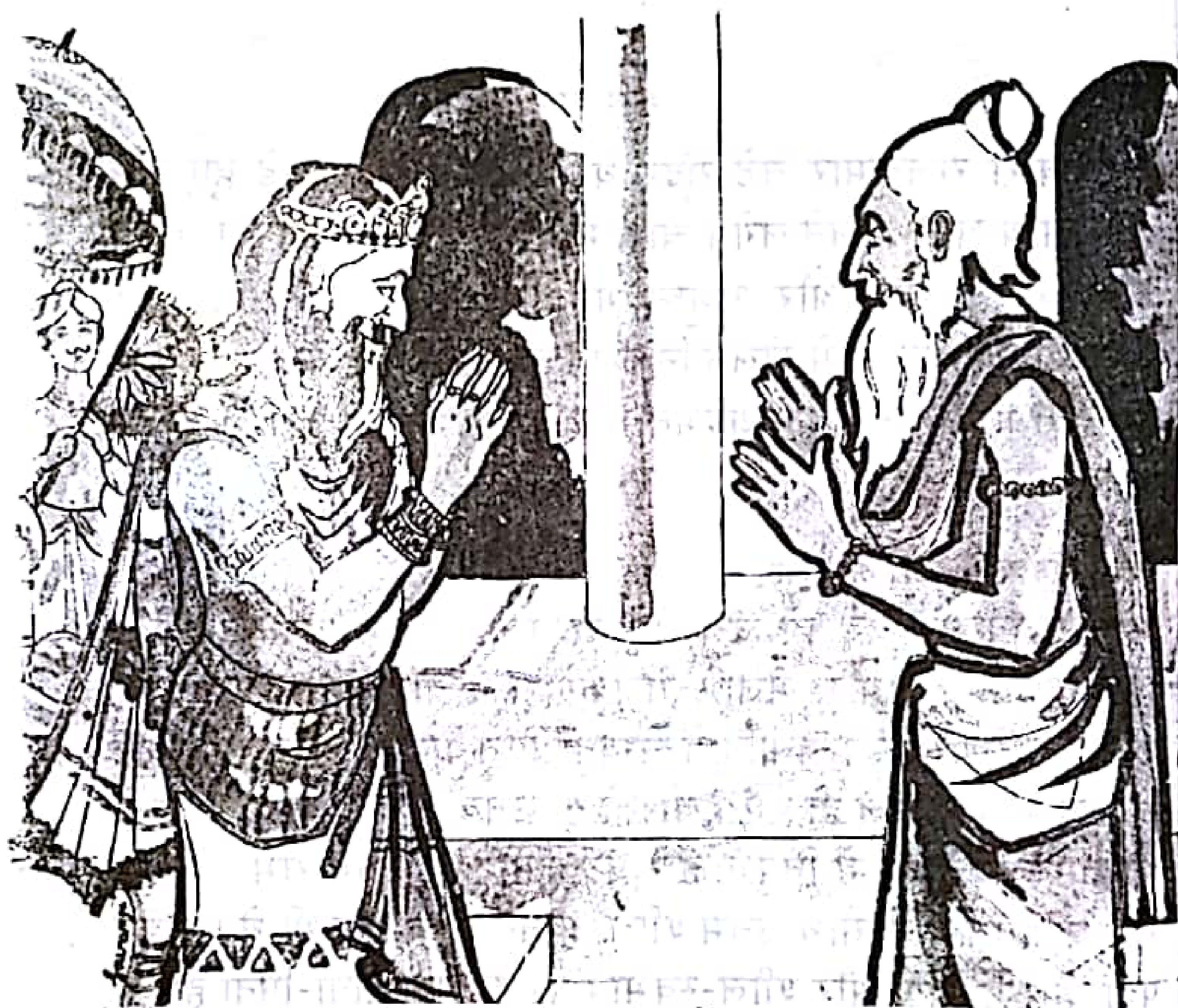
राजा ने बड़ी धूमधाम से पुत्रोत्सव मनाया। राजमहल में मंगलचार होने लगे और स्त्रियाँ बधाइयाँ गाने लगीं। देवताओं ने फूलों की वर्षा की। अप्सराएँ नृत्य करने लगीं। राजा और प्रजा के हर्ष का ठिकाना न रहा।

चारों राजकुमार बड़े सुंदर थे। धीरे-धीरे वे बड़े हुए और साथ-साथ खाने-खेलने लगे। चारों में बड़ी प्रीति थी। लक्ष्मण राम के साथ अधिक रहते और शत्रुघ्न भरत के साथ। चारों भाई जब अयोध्या की गलियों में खेलने निकलते तब लोग उन्हें देखकर ठगे-से रह जाते। राम के रूप में अद्‌भुत आकर्षण था। उन्हें जो देखता, वह देखता ही रह जाता।

विंश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा

अब राजकुमार बड़े हो चले थे। राजा दशरथ ने उनको सुयोग्य शिक्षकों के आश्रम में भेजा। राजकुमारों ने थोड़े ही समय में वेद, शास्त्र, पुराण और राजनीति में योग्यता प्राप्त कर ली। धनुर्विद्या और धनुर्वेद में वे कुशल हो गए। वीरता तो उनके रक्त में ही थी। चारों भाई सब विद्याओं में निपुण और पराक्रमी थे। उनमें राम सर्वोपरि थे। बलविक्रम के साथ उनमें शील, विनय आदि गुण भी थे। अपने पुत्रों के रूप, गुण और शील-स्वभाव को देखकर माता-पिता हर्ष से फूले नहीं समाते थे।

राजकुमारों के युवा होने पर राजा को उनके विवाह की चिंता हुई। वे इस विषय में एक दिन मंत्रियों और पुरोहितों से बातचीत कर ही रहे थे कि द्वारपाल ने समाचार दिया, ''महाराज, महर्षि विश्वामित्र पधारे हैं।'' सुनते ही राजा दशरथ सिंहासन छोड़कर उनके स्वागत्त के लिए आगे बढ़े। राजा ने मुनि को सादर प्रणाम किया, उन्हें उचित आसन पर बैठाया और सेवा-सत्कार से संतुष्ट किया। इसके बाद राजा दशरथ हाथ जोड़कर बोले, ''भगवन्, आपके पधारने से हमारी नगरी धन्य हुई। अब आज्ञा करें कि क्या सेवा करूँ।'' विश्वामित्र प्रसन्न होकर बोले, ''राजन् विशेष कार्यवश ही आपके पास आया हूँ।



मुनि आगमन सुना जब राजा, मिलन गयउ लै विप्र समाजा।

हमारे यज्ञ में राक्षस विघ्न डाल रहे हैं। राक्षस-राज रावण के दो अनुचर मारीच और सुबाहु हमें यज्ञ नहीं करने देते। यज्ञ की रक्षा के लिए हम आपके वीर पुत्र राम को माँगने आए हैं। मेरे साथ उन्हें भेज दीजिए। आप डरें नहीं, राम की भी इसमे भलाई है। मैं आज ही लौट जाना चाहता हूँ।''

इतना सुनते ही राजा के प्राण सूख गए। वे गिड़गिड़ा कर विश्वामित्र से बोले– ''ऋषिराज, यह आपने कैसी बात कह दी? रावण के सामने तो देवता, दानव, गंधर्व कोई खड़ा भी नहीं हो सकता। उससे वैर मोल लेना हँसी-खेल नहीं। मेरा राम तो अभी बालक ही है।

मैं अपनी सेना लेकर आपके साथ चलता हूँ और आपके यज्ञ की रक्षा करूँगा। मेरे प्राणप्यारे राम पर कृपा कीजिए। बुढ़ापे में पुत्र-वियोग से मुझे दुःखी न कीजिए।" इतना कहकर राजा विश्वामित्र के चरणों पर गिर पड़े।

विश्वामित्र रुष्ट होकर बोले, "राजन्, आपका आचरण तो रघुवंशियों जैसा नहीं है। लो, मैं जाता हूँ।" तब राजगुरु वशिष्ठ ने राजा को समझाया—"महर्षि विश्वामित्र सिद्ध पुरुष हैं, तपस्वी हैं और अनेक गुप्त विद्याओं के पंडित हैं। वे कुछ सोच-समझकर ही आपके पास आए हैं। राम को जाने दें। कोई इनका बाल भी बाँका न कर सकेगा।"

तब राजा दशरथ ने राम को विश्वामित्र के हाथ सौंप दिया। लक्ष्मण भी बड़े भाई के साथ चल दिए। विश्वामित्र के पीछे-पीछे धनुष-बाण लिए दोनों भाई सरयू के किनारे-किनारे जा रहे थे। जब वे तीन कोस दूर निकल गए, तब विश्वामित्र ने कहा—"तुम दोनों भाई नदी में आचमन कर मेरे पास आओ। मैं तुम्हें बला-अतिबला नाम की गुप्त विद्याएँ सिखाना चाहता हूँ। इन विद्याओं के मिलने पर तुम्हारा आत्मबल बढ़ जाएगा और आसुरी शक्तियों से तुम्हारी सुरक्षा रहेगी।" दोनों भाइयों ने ऋषि की आज्ञा का पालन किया। विद्याओं के ग्रहण करते ही उनमें नवीन स्फूर्ति आ गई। उस दिन वे सरयू नदी के किनारे ही टिक गए।

अगले दिन वे सरयू के किनारे-किनारे फिर आगे बढ़े। सरयू और गंगा के संगम पर उन्होंने गंगा पार की। अब वे एक भयानक वन में पहुँचे। जहाँ-तहाँ हाथी, सिंह, सूअर दिखाई पड़ने लगे। हिंसक पशुओं की आवाजों से वन गूँज रहा था। महर्षि विश्वामित्र ने बताया यहाँ से दो कोस की दूरी पर ताड़का रहती है। वह बड़ी बलवती,



भयानक और दुष्टा है। उसने अपने पुत्र मारीच की सहायता से यहाँ के जनपदों को उजाड़ दिया है। अब तो यहाँ भयानक वन ही तुम देख रहे हो। आज तुम्हें उसका संहार करना है। स्त्री समझकर उसे छोड़ना ठीक न होगा।

श्रीराम ने उत्तर दिया—मैं आपकी आज्ञा का अवश्य पालन करूँगा। यह कहकर उन्होंने धनुष की डोरी खींचकर छोड़ दी। उसकी टंकार से दिशाएँ गूँज उठीं। महाराक्षसी ताड़का भी उसे सुनकर एक बार घबरा गई और फिर गरजती हुई दौड़ी। राम के पास पहुँचकर उसने धूल का बादल उड़ाया और वह पत्थरों की वर्षा करने लगी। राम ने उसे बाणों से घायल कर दिया। तब ताड़का अपनी लंबी बाँहें फैलाकर राम पर झपटी। वह अदृश्य होकर फिर पत्थर बरसाने लगी। राम ने उसे चारों ओर से बाणों से घेर लिया। फिर उसके हृदय में उन्होंने ऐसा तीक्ष्ण बाण मारा कि वह हरहरा कर गिर पड़ी। विश्वामित्र ने राम को गले से लगा लिया। प्रसन्न होकर ऋषि ने दण्डचक्र, कालचक्र, ब्रह्मास्त्र आदि अनेक दिव्य अस्त्र राम को दिए।



चले जात मुनि दीन्हि देखाई, सुनि ताड़का क्रोध करि धाई।

राम और लक्ष्मण को साथ लिए मुनि विश्वामित्र अपने सिद्धाश्रम तक आगे बढ़ते गए। महर्षि विश्वामित्र का यहीं आश्रम था। आश्रमवासियों ने उनका यथोचित सत्कार किया। विश्वामित्र ने उसी दिन यज्ञ आरंभ कर दिया। पाँच दिन तक यज्ञ निर्विघ्न चलता रहा। छठे दिन आकाश में घोर गर्जना सुनाई पड़ी। देखते-देखते काले बादल जैसे दो विशालकाय राक्षस वहाँ आ पहुँचे। इनमें से एक ताड़का का पुत्र मारीच था और दूसरा उसका साथी सुबाहु था। इन राक्षसों के पीछे बहुत बड़ी सेना भी थी। श्रीराम ने मारीच पर मानवास्त्र चलाया। उसके आघात से वह मूर्च्छित हो गया और बहुत दूर समुद्र के पास जा गिरा। जब उसे होश आया तो वह दक्षिण की ओर भाग गया। सुबाहु को श्रीराम ने आग्नेयास्त्र से मार डाला और सारी राक्षस सेना का वायव्यास्त्र से संहार कर दिया। विश्वामित्र का

यज्ञ निर्विघ्न समाप्त हो गया। विश्वामित्र ने राम को हृदय से लगा लिया। सब ऋषि राम की प्रशंसा करने लगे।

श्रीराम ने मुनि के चरणों में प्रणाम किया और हाथ जोड़कर पूछा–"अब हमारे लिए क्या आज्ञा है?" विश्वामित्र ने बड़े स्नेह से कहा–"वत्स, मिथिला के राजा जनक को तो तुम जानते होगे। वहाँ बहुत बड़ा यज्ञ हो रहा है। हम लोगों को वहाँ जाना है। तुम दोनों भाई भी हमारे साथ चलो। राजा जनक के यहाँ एक विचित्र धनुष भी है उसे कोई उठा भी नहीं पाता। वह धनुष भी तुम देखना।"

जनकपुरी में राम और लक्ष्मण

विश्वामित्र के साथ दोनों राजकुमार मिथिला के लिए चल दिए। सिद्धाश्रम के अनेक अन्य ऋषि भी साथ में थे। विश्वामित्र तरह-तरह की पौराणिक कथाएँ सुनाते जाते। नए स्थानों और वनों के विषय में श्रीराम उनसे पूछते और मुनि बड़े प्रेम से उनकी कथा बताते। सोन नदी को पारकर वे सब एक बड़े सुंदर प्रदेश में पहुँचे। वहाँ बड़े सुहावने वन थे। श्रीराम ने उस देश के बारे में मुनि से पूछा। विश्वामित्र ने बताया कि यह मेरा ही देश है। बहुत पहले मैं यहाँ का राजा था। इसी प्रसंग में उन्होंने अपनी वंशावली भी राम-लक्ष्मण को बताई। रात को विश्राम कर वे फिर आगे बढ़े। विश्वामित्र ने गंगा जी की उत्पत्ति,पार्वती की कथा और स्वामिकार्तिक के जन्म की कहानी राम-लक्ष्मण को मार्ग में सुनाई।

जब वे मिथिला के निकट पहुँचे तो नगर के बाहर उन्हें एक सूना-सा आश्रम दिखाई पड़ा। श्रीराम ने उसके विषय में जानना चाहा। ऋषि बोले–किसी समय यह गौतम मुनि का आश्रम था। जब वे अपनी पत्नी अहल्या के साथ यहाँ रहते थे, तब इसकी शोभा अद्‌भुत थी। एक दिन बड़ी दुखद घटना हुई। एक रात को सवेरा हो जाने के

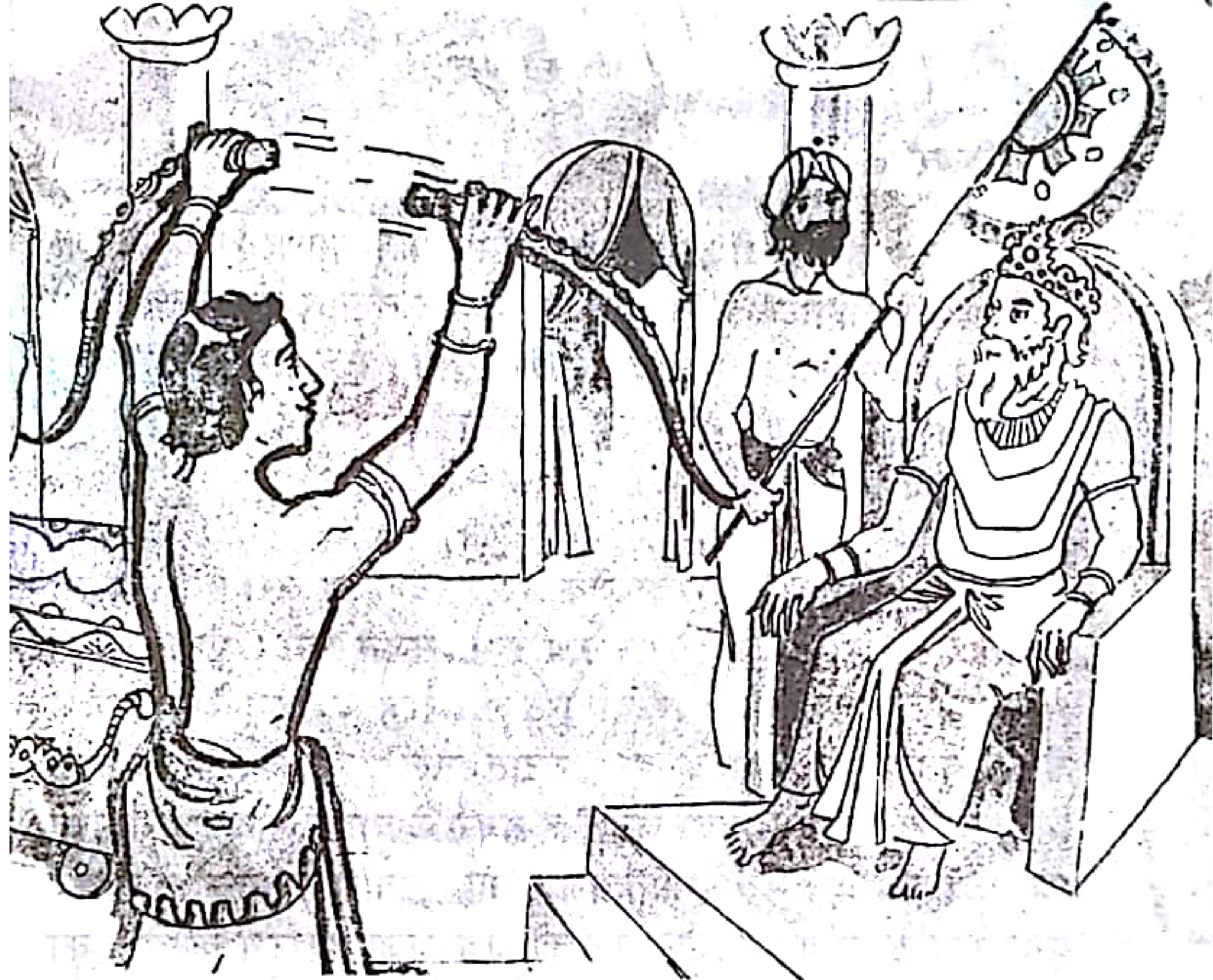


श्रम में, जब गौतम ऋषि गंगा-स्नान को चले गए तो ऋषि के भेष में इन्द्र आश्रम में घुस आया। जब वह आश्रम से निकल रहा था, उसी समय महर्षि गौतम आ पहुँचे। इन्द्र को देखकर उन्हें क्रोध हो आया। उसे कठोर शाप दिया। उन्होंने अहल्या का भी त्याग कर दिया। अब वह पत्थर की मूर्ति की तरह रहती है। मन में राम-राम कहती हुई वह दिन काट रही है। यह कथा सुनकर राम को अहल्या पर दया आई। राम ने आगे बढ़कर ऋषि-पत्नी के पैर छुए। राम का स्पर्श पाते ही अहल्या शापमुक्त हो गई।वह पहले की तरह सुंदर भी हो गई। गौतम ऋषि ने भी अहल्या को सहर्ष स्वीकार कर लिया। इस घटना से राम का यश चारों ओर फैल गया।

राजा जनक को विश्वामित्र के आने का समाचार मिला। वे शतानन्द तथा अन्य ऋषियों को लेकर स्वागत करने के लिए नगर के बाहर आए। आते ही उन्होंने मुनि को आदर के साथ प्रणाम किया और कुशल-समाचार पूछा। जब उनकी दृष्टि राम-लक्ष्मण की ओर गई, तब राजा जनक की आँखें खुली की खुली रह गईं। उन्होंने विश्वामित्र जी से पूछा– "ये सुंदर बालक कौन हैं? किसी राजकुल के भूषण हैं अथवा साक्षात् भगवान ही हैं? मेरा सहज विरागी मन भी इन्हें देखकर इनकी ओर खिंचा चला जा रहा है।" विश्वामित्र ने कहा– "महाराज! आपका कहना ठीक ही है। ये कौशल नरेश महाराज दशरथ के पुत्र हैं। आपके 'सुनाभ' नाम के विचित्र धनुष को दिखाने के लिए मैं इन्हें अपने साथ ले आया हूँ। पुत्री सीता के विवाह के संबंध में जो आपने प्रण किया है, उसे मैं सुन चुका हूँ।" राजा जनक ने मुनि की स्तुति की और यज्ञशाला के निकट ही एक रमणीक उद्यान में मुनि और राम-लक्ष्मण के ठहरने का प्रबंध कर दिया।

अगले दिन गुरु विश्वामित्र के साथ राम-लक्ष्मग यज्ञशाला में गए। राजा ने उन्हें एक ऊँचे आसन पर बैठाया। विश्वामित्र ऋषि ने जब फिर धनुष की बात छेड़ी, तब जनक ने सेवकों को बुलाकर धनुष ले आने की आज्ञा दी। यह धनुष लोहे के आठ पहियोंवाले एक बड़े संदूक में रखा था। उसे खींचकर जब सेवक ले आए, तब राजा जनक बोले– मुनिवर! यह शंकर जी का धनुष है। देवताओं ने हमारे एक पूर्वज देवरात को इसे दिया था। इस भारी धनुष को कोई नहीं उठा सका। प्रत्यंचा चढ़ाना तो दूर की बात है। मेरे प्रण को सुनकर अनेक राजा और देव-दानव आए और लज्जित होकर चले गए।

गुरु का संकेत पाकर श्रीराम ने धनुष सहज ही उठा लिया और ज्योंहि प्रत्यंचा चढ़ाकर उसे खींचना चाहा कि वह बीच से टूट कर दो



तेहि छन राम मध्य धनु तोरा, भरे भुवन धुनि घोर कठोरा।

टुकड़े हो गया। वज्रपात जैसा भयंकर शब्द हुआ और पृथ्वी काँपने लगी।

धनुष टूटते हीं राजा जनक के हर्ष का ठिकाना न रहा। राम के सौंदर्य और बलविक्रम को देखकर वे बोले– मुनिवर! आपकी कृपा से मुझे अपनी प्यारी बेटी के लिए मनचाहा वर मिल गया। अगर आपकी अनुमति मिल जाए, तो मैं महाराज दशरथ के पास संदेश भेजकर बरात ले आने का निमंत्रण भेज दूँ। विश्वामित्र बोले, अब क्या पूछना! शुभ कार्य में देर क्यों की जाए।

राजा जनक ने अपने चतुर मंत्रियों को शीघ्रगामी रथ द्वारा अयोध्या जाने की आज्ञा दी।

राम-विवाह

राजा जनक के मंत्रियों द्वारा राम-लक्ष्मण का समाचार पाकर राजा दशरथ बड़े आनंदित हुए। धनुर्भंग की बात सुनकर तो उनके आनंद का ठिकाना न रहा। महल में जाकर उन्होंने सब समाचार रानियों को सुनाए। रानियाँ भी फूली न समाईं। उन्होंने ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा दी।

गुरु वशिष्ठ की आज्ञा लेकर राजा दशरथ बरात की तैयारी कराने लगे। हाथी, घोड़े और रथ सभी सजने लगे। छैल-छबीले सवार घोड़े नाचने लगे। गुरु वशिष्ठ और राजा दशरथ दिव्य रथों में बैठे। चतुरंगिणी सेना के साथ बरात चल पड़ी और पाँचवें दिन मिथिला जा पहुँची। राजा जनक ने नगर के बाहर आकर बरात का स्वागत किया और भली-भाँति सजाए गए जनवासे में सबको ले जाकर यथायोग्य ठहराया। विश्वामित्र को जब राजा दशरथ के आने का समाचार मिला तब दोनों राजकुमारों को लेकर वे जनवासे पहुँचे। राम-लक्ष्मण ने पिता के चरणों में प्रणाम किया। राजा दशरथ ने विश्वामित्र के चरण छुए और कहा– "मुनिवर! आपकी कृपा से ही शुभ दिन मुझे देखने को मिला है।"

राजा जनक की सारी नगरी जगमग-जगमग कर रही थी। एक-एक घर, एक-एक द्वार वंदनवारों से सजा था। चारों ओर मंगल गीत सुनाई दे रहे थे। राजमार्ग और राजमहल में दर्शकों की अपार भीड़ थी। विवाह-मंडप मणियों और हीरों के फूल-पत्तों से सजा था। मणियों के बने भौंरे और तरह-तरह के पक्षी विवाह-मंडप पर जड़े थे, जो हवा चलने से गूँजते-कूजते थे।

चारों राजकुमारों को लेकर गुरु वशिष्ठ के साथ महाराज दशरथ विवाह-मंडप में पधारे। बहुमूल्य वस्त्रों और आभूषणों से सुसज्जित चारों राजकुमारियों को लेकर राजा जनक भी मंडप में आए। राजमहल की अनेक स्त्रियाँ भी सजकर विवाह देखने पहुँचीं। राजा जनक सीता को दिखाकर महाराज दशरथ से बोले– राजन्! यह मेरी बड़ी बेटी सीता है जो मुझे हल चलाते समय पृथ्वी से मिली थी। आपके वीर पुत्र श्रीराम ने मेरा प्रण पूरा कर इसे वरण करने का अधिकार प्राप्त किया है। यह मेरी दूसरी पुत्री उर्मिला है और ये दोनों कन्याएँ मेरे छोटे भाई कुशध्वज की हैं। बड़ी का नाम मांडवी है और छोटी का श्रुतकीर्ति। मेरी इच्छा है कि सीता के विवाह के साथ इनका भी विवाह हो जाए। लक्ष्मण के लिए उर्मिला को, भरत के लिए मांडवी को और शत्रुघ्न के लिए श्रुतकीर्ति को स्वीकार कर मुझे कृतार्थ करें। जनक के प्रस्ताव को राजा दशरथ ने सहर्ष स्वीकार कर लिया, तब अग्नि के सामने चारों कन्याओं को अपने-अपने पतियों के हाथ में सौंपते हुए राजा जनक ने कहा कि इन कन्याओं को मैं तुम्हारे हाथ सौंपता हूँ। ये छाया की भाँति तुम्हारे साथ रहेंगी। तुम इनका पाणिग्रहण करो, इनकी सब तरह से रक्षा करना तुम्हारा धर्म होगा। गुरु वशिष्ठ और शतानन्द ने वेद-मंत्रों के साथ विधिवत् विवाह कराया।



तब राजा दशरथ राजकुमारों और पुत्र-वधुओं को लेकर जनवासे लौट आए। जनक ने कन्याओं और सब बरातियों को सुंदर उपहार दिए। राजा दशरथ ने भी सोने से सींग मढ़ाकर दूध देने वाली सहस्रों गायें ब्राह्मणों को दान में दीं। दूसरे दिन विश्वामित्र ने आकर राजा दशरथ को बधाई दी और सबसे विदा लेकर वे अपने आश्रम को लौट गए।

कुछ दिन तक जनक का आतिथ्य ग्रहण करने के पश्चात् राजा दशरथ बरात के साथ अपने नगर को लौट चले। वे कुछ ही दूर गए होंगे कि सहसा भयंकर आँधी-सी आई और उसके साथ ही क्रोध की साक्षात् मूर्ति परशुराम फरसा और धनुष बाण लिए प्रकट हो गए उन्हें देखते ही अयोध्यावासी डर के मारे अधमरे-से हो गए और राजा दशरथ के तो होश ही उड़ गए।

राम का रास्ता रोककर परशुराम बोले—"राम! शिव के पुराने धनुष को तोड़कर तुम्हारा हौसला बहुत बढ़ गया है। मैं तुम्हारे अहंकार को चूर करूँगा।" राजा दशरथ ने गिड़गिड़ाकर परशुराम से बड़ी अनुनय-विनय की और राम पर अनुग्रह करने की प्रार्थना की। परशुराम ने दशरथ की बात सुनी-अनसुनी कर दी और राम से फिर बोले, "मेरे इस धनुष को चढ़ाओ, यदि न चढ़ा सके तो तुम तत्काल मेरे फरसे का आहार बनोगे।"

यह सुनते ही राजा दशरथ तो बेसुध होकर गिर पड़े, मनस्वी राम निर्भीकता से बोले, "मेरा रूप आप देखना चाहते हैं तो देखें।" उन्होंने परशुराम के धनुष बाण लेकर प्रत्यंचा चढ़ा दी और धनुष पर बाण रखकर बोले, "मैं इस बाण से आपकी तपस्या का समस्त प्रभाव अभी नष्ट करता हूँ और मनोगति से आकाश में विचरण करने की शक्ति भी नष्ट करता हूँ।" परशुराम हतप्रभ हो गए। उन्होंने राम

की स्तुति की और आशीर्वाद दिए और यह प्रार्थना की कि तप का फल भले ही नष्ट कर दें, परंतु मनोगति नष्ट न करें जिससे मैं महेन्द्र पर्वत पर लौट सकूँ। श्रीराम ने उनकी बात मान ली। परशुराम राम की प्रशंसा करते हुए तत्काल चले गए। परशुराम के चले जाने के बाद बारात आगे बढ़ी।

बारात के पहुँचते ही अयोध्या में घर-घर आनंदोत्सव होने लगे। गलियों में शंख और मृदंग की ध्वनि गूँज उठी। स्त्रियों ने मंगल-गान किए और फूल बरसाए। रानियों ने पुत्रों और पुत्र-वधुओं की आरती उतारी। उस समय राजा दशरथ के भवन की शोभा देखते ही बनती थी।

राजकुमार शील-गुण-संपन्न पत्नियाँ पाकर बड़े प्रसन्न थे। सीताजी के अनुपम रूप, गुण और सेवा से श्रीराम और सास-ससुर सब प्रकार से संतुष्ट थे।

राजकुल में दिन-दिन सुख-समृद्धि की वृद्धि होने लगी। समस्त कौशल राज्य का भाग्य जग गया।

प्रश्न

1. राजा दशरथ और उनकी राजधानी का संक्षेप में वर्णन करो।
2. श्रीराम के जन्म की क्या कथा है?
3. विश्वामित्र श्रीराम को लेने के लिए क्यों आए? श्रीराम और लक्ष्मण को महर्षि की सेवा से क्या लाभ हुआ?
4. अहल्या कौन थी? उसके उद्धार की कथा बताओ।
5. सीता और राम के विवाह की कथा संक्षेप में बताओ।
6. राम और परशुराम की भेंट का संक्षेम में वर्णन करो।

बोध और विचार

विश्वामित्र जैसे सुयोग्य शिक्षक और राम-लक्ष्मण जैसे योग्य शिष्यों ने क्या आदर्श स्थापित किया?

—•—

2. अयोध्या-कांड

राम के अभिषेक की तैयारी और कैकेयी के दो वरदान

भरत के मामा युधाजित अपने पिता की आज्ञा से भरत को लेने के लिए अयोध्या आए थे। जब अयोध्या में पहुँचकर उन्हें बरात का समाचार मिला, तब वे भी जनकपुर जा पहुँचे। जनकपुर से लौटने पर कुछ दिन बाद राजा दशरथ ने भरत और शत्रुघ्न को कैकेय देश भेज दिया। नाना और मामा ने उन्हें बड़े लाड़-प्यार से रखा। भरत की इच्छा अपने नगर लौटने की होती, तो उनके नाना अनुरोध कर उन्हें रोक लेते। इस तरह ननिहाल में रहते भरत और शत्रुघ्न को काफी दिन हो गए। अयोध्या में केवल राम-लक्ष्मण रहे।

अब राम राज-काज में पिता का हाथ बँटाने लगे। राम सदा दूसरों की भलाई की बात सोचते और सदाचार का पालन करते। जैसे वे नम्र और विद्वान थे, वैसे ही शूरवीर और पराक्रमी भी। छोटे-बड़े सबसे वे प्रेमपूर्वक मिलते थे। क्रोध में भी किसी से दुर्वचन नहीं बोलते थे। प्रजा उनको बहुत चाहने लगी। राम के कामों से राजा दशरथ भी बड़े प्रसन्न थे। वे अब बूढ़े भी हो चले थे। उन्होंने निश्चय किया राम को युवराज बना दिया जाए। राजा ने मंत्रियों से सलाह की और कैकेयराज और मिथिला-नरेश को छोड़कर सब मित्र राजाओं को अयोध्या आने का निमंत्रण भेजा जिससे उनकी सम्मति भी मिल जाए।

निश्चित समय पर सभा-भवन में आमंत्रित राजागण आ गए। अयोध्यावासी भी उपस्थित हुए। राजा दशरथ ने सबके सामने राम को युवराज बनाने का प्रस्ताव रखा। सबने एक स्वर से राम की प्रशंसा की और उनके गुणों का वर्णन करते हुए प्रस्ताव का समर्थन किया।

राजा ने सबको धन्यवाद करते हुए कहा कि मैं कल ही राम का अभिषेक करना चाहता हूँ। आप लोग उत्सव में सम्मिलित हों। इस घोषणा के बाद उन्होंने सुमंत को भेजकर राम को सभा में बुलवाया। राम के आसन ग्रहण करने पर राजा दशरथ बोले–"जनता ने तुम्हें अपना राजा चुना है। सावधानी से तुम राज धर्म का पालन करना और इस कुल की मर्यादा की रक्षा करना।"

सभा विसर्जित करके राजा दशरथ अपने भवन में चले राम से एकांत में बात करने के लिए उन्होंने राम को फिर से बुलवा लिया। राजा दशरथ राम से बोले, "बेटा, अब मैं बूढ़ा हो गया हूँ और राज-काज चलाने में अपने को असमर्थ पाता हूँ। न जाने मेरी आँखें कब बंद हो जाएँ। भरत भी इस समय ननिहाल में है। मैं चाहता हूँ जनता ने तुम्हें राजा चुना है तो यह नेक काम मेरी आँखों के सामने संपूर्ण हो, ऐसे शुभ कार्यों में तरह-तरह की विघ्न-बाधाएँ पड़ने का डर रहता है। इसलिए अत्यंत सावधान रहने की आवश्यकता होती है। तुम भी आज की रात सावधान रहना और संयम से भी रहना।"

राम उठकर माता कौशल्या के पास गए। माता को प्रणाम करके उन्होंने राजतिलक की सब बातें सुनाईं। माता ने पुत्र को हृदय से लगा लिया और हर्ष से फूली न समाई। फिर वे मंगलगान और दान-पुण्य में लग गईं। यह शुभ समाचार नगरभर में फैल गया। नगर सजने लगा और चारों ओर आनंद मनाया जाने लगा।

इधर एक ओर तो अभिषेक की तैयारियाँ हो रही थीं, उधर दूसरी ओर दूसरा ही कुचक्र चल रहा था। इस कुचक्र को चलानेवाली थी कैकेयी की मुँहलगी दासी मंथरा। वह जैसी कुरूप और कुबड़ी थी, वैसी ही कुटिल भी थी।



नामु मंथरा मंदमति, चेरी कैकयि केरि।
अजस पेटारी ताहि करि, गई गिरा मति फेरि।।

मंथरा को जैसे ही राम के अभिषेक का समाचार मिला, वह तत्काल कैकेयी के महल में पहुँची और बोली, ''अरी मेरी रानी! तू कैसी वेसमझ है!'' मौत तेरे सिर नाच रही है और तू सुख की नींद सो रही है!'' कैकेयी ने चौंककर पूछा, ''मंथरा, क्या बात है। साफ क्यों नहीं वताती ? राम तो कुशल से है ? क्या भरत का कोई समाचार आया है ?'' मंथरा बोली, ''और तो सब ठीक है। बस तुम्हारे सुख-सौभाग्य का अंत होनेवाला है। भरत को ननिहाल भेजकर राजा कल ही कौशल्या-पुत्र राम को राज-काज सौंपने जा रहे हैं।'' यह सुनते ही कैकेयी बोली, ''इसमें और अधिक प्रसन्नता की बात क्या होगी! मेरे लिए जैसे भरत वैसे ही राम। लो, यह हार मैं तुझे उपहार में देती हूँ।''

मंथरा ने हार लेकर फेंक दिया और बोली–"भोली रानी, अक्ल से काम लो। मुझे तो यह देखकर आश्चर्य होता है कि तुमको अपने निकट का संकट भी दिखाई नहीं देता। राज पाकर राम का हृदय भरत के प्रति बदल भी सकता है। कौशल्या राजमाता होंगी और तुम उनकी दासी बनोगी।" कैकेयी फिर भी विचलित नहीं हुई। तब लंबी साँस लेकर मंथरा फिर बोली "पगली रानी, राम के राजा होते ही भरत मारे-मारे फिरेंगे। राजा की विशेष प्रिय होने के मद में तुमने कौशल्या के साथ कैसे-कैसे दुर्व्यवहार किए हैं, यह तुम जानती ही हो। राजमाता होते ही वे उन सबका तुमसे बदला लेंगी। इस संकट से बचने का एंक ही उपाय है कि किसी तरह राम को वन भेज दिया जाए और भरत का राजतिलक हो।"

अब कैकेयी की बुद्धि पलटी। अपना कार्य सिद्ध होते देख मंथरा बोली– "रानी याद करो, एक बार शंबासुर के विरुद्ध इन्द्र की सहायता करने के लिए महाराज गए थे। तुम भी पति के साथ गई थी। तुम्हीं ने रणक्षेत्र में राजा के प्राणों की रक्षा की थी। राजा ने प्रसन्न होकर तुम्हें दो वरदान माँगने को कहा था। वे दोनों वरदान तुमने अब तक नहीं माँगे। अब माँग लो। कोप भवन में जा बैठो और जब राम की सौगंध खाकर राजा वचन दे, तब एक वरदान से भरत को राजतिलक और दूसरे से राम को चौदह वर्ष का वनवास माँग लो।"

कैकेयी ने ऐसा ही किया।

रात को जब राजा दशरथ कैकेयी के महल में पहुँचे तो उनको रानी के कोप भवन में जाने का समाचार मिला। इस खबर से राजा के प्राण सूख गए। कैकेयी उनको प्राणों से भी अधिक प्यारी थी। वे उनके शरीर पर हाथ फेर कर मनाने लगे। राजा ने कहा– "तुम क्यों ऐंसी रूठी पड़ी हो! तुझे मालूम है कि तेरी प्रसन्नता के लिए मैं रंक को राजा

और राजा को रंक बनाने के लिए तैयार हूँ। यदि किसी ने तुम्हारा अहित किया हो तो उसका सिर अभी कटवा लूँ। मैं अपने पुण्यों और प्राणप्यारे राम की शपथ लेकर कहता हूँ कि तुम जो कहोगी, वही करूँगा।''

राजा ने जब राम की शपथ ले ली, तो कैकेयी ने दोनों वरदान माँगे। राम क़े वनवास की बात सुनकर राजा सन्न रह गए और शोक के कारण मूर्च्छित हो गए। कुछ देर बाद जब वे होश में आए, तब 'राम', 'राम' कहकर उठ बैठे और कैकेयी को तरह-तरह से समझाने लगे। वे कैकेयी से बोले, ''भरत को बुलाकर मैं उसका राजतिलक कर दूँगा, पर मेरे राम पर दया करो, मुझ पर दया करो।''

कैकेयी किसी तरह न मानी। वह बोली, ''राजन् आपकी बात रघुवंशियों जैसी नहीं है। आपके पूर्वजों ने सत्य पालन के लिए न जाने

चलेउ सुमंत्रु राय रुख जानी, लखी कुचाल कीन्हि कुछ रानी।



कितने कष्ट झेले। हरिश्चन्द्र और शिवी का नाम इसी कारण आदर से लिया जाता है। सत्य ही संसार में ईश्वर है। धर्म भी सत्य पर टिका है। सत्य से बढ़कर और कोई नहीं। सत्य को छोड़कर आप संसार को कैसे मुँह दिखाएँगे, रही मेरी बात, अगर आप वरदान नहीं देते, तो मैं आत्महत्या कर लूँगी और आप इस कलंक और अपयश का भार जीवनभर ढोते रहेंगे।'' राजा समझ गए कि अब कुछ होनेवाला नहीं।

राजा रातभर बेसुध से पड़े रहे। सवेरा होने पर सुमंत कैकेयी के महल में समाचार लेने आए। राजा की दशा देखकर वे समझ गए कि कैकेयी ने कोई कुचाल की है। सुमंत ने कैकेयी से राजा के दुख का कारण पूछा। कैकेयी बोली– ''मैं कुछ नहीं जानती। राम को ही वे अपने मन की बात बताएँगे।

राजा का संकेत पाकर सुमंत राम को बुलाने गए। थोड़ी देर में लक्ष्मण के साथ राम आ गए। राम को देखते ही दशरथ बेसुध हो गए और कुछ बोल न सके। तब कैकेयी ने राम को सब बातें बताईं। अपने वरदान की भी बताईं। पिता का रुख देखकर राम ने दृढ़ता से कहा– ''पिताजी की प्रतिज्ञा की रक्षा के लिए मैं अभी वन जाता हूँ। भरत को बुलवाकर उनका राजतिलक कर दीजिए। मैं भाई भरत के लिए सब कुछ छोड़ता हूँ।''

अब राम अपनी माता कौशल्या के पास गए और उनको कैकेयी के भवन की सब बातें बताईं। यह समाचार सुनकर माता कौशल्या बेसुध-सी हो गईं और अपने भाग्य को कोसने लगीं– मैं तो निरंतर अपने को घर की दासी मानकर सबकी सेवा करती रही। भरत को भी अपना बेटा ही माना। कैकेयी का भी बुरा नहीं चाहा, फिर मेरे साथ यह अन्याय क्यों?

माता कौशल्या का दुख देखकर लक्ष्मण के क्रोध की आग भड़क

उठी। श्रीराम ने लक्ष्मण को समझा-बुझाकर शांत किया और कहा– ''मेरे वन जाने की तैयारी करो।''

राम वन-गमन

माता के चरण छूकर राम ने वन जाने की आज्ञा माँगी। कौशल्या ने कहा– ''मैं तुम्हें वन जाने से रोकती हूँ। तुम्हारे पिता कैकेयी के बहकावे में आ गए हैं। जब तुमने कोई अपराध ही नहीं किया, तब वन क्यों जाओ। राजा की आज्ञा अनुचित है। उसे मत मानो।''

राम ने नम्रता से उत्तर दिया–''माँ! पिता की आज्ञा मुझे माननी चाहिए और तुम्हें भी माननी चाहिए। उनकी आज्ञा का उल्लंघन करना मेरी शक्ति के बाहर है। अब मुझे वन जाने की अनुमति दो और आशीर्वाद दो।'' लक्ष्मण से उन्होंने कहा–''भैया! भाग्यवश जीवन में ऐसे उलट-फेर, उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। इसमें किसी का दोष नहीं– न राजा का और न माता कैकेयी का।''

भाग्य की बात लक्ष्मण को बिल्कुल अच्छी नहीं लगी। वे तमककर बोले–''भाग्य के भरोसे तो जीना कायरों का काम है। जीवन उसी का सफल है, जो अपने भरोसे जीता है। अपने बाहुबल से आप राज-सिंहासन पर बैठें। अगर किसी ने विरोध किया तो मैं अयोध्या में आग की वर्षा कर दूँगा।'' श्रीराम ने लक्ष्मण को समझाया– मेरे लिए जैसा राजसिंहासन वैसा ही वन। अधर्म का राज्य मुझे नहीं चाहिए। तुम जो कह रहे हो, वह आर्यों के अनुकूल व्यवहार नहीं है। लक्ष्मण चुप हो गए, कौशल्या रोकर राम से लिपट गई और कहने लगी, जाते ही हो तो मुझे भी साथ ले चलो। राम ने उन्हें समझा-बुझाकर शांत किया और वन जाने की अनुमति माँगी। माता ने कहा–बेटा! जाओ, जिस धर्म का तुम पालन कर रहे हो, वही तुम्हारी रक्षा करे। मेरे व्रत-पूजन का सब फल तुम्हें मिले, सब दिशाएँ

तुम्हारे लिए मंगलमय हों, मेरा रोम-रोम तुम्हें आशीर्वाद देता है।

माता से विदा लेकर राम सीता के पास गए। सारा हाल बताकर सीता से भी उन्होंने विदा माँगी, यह भी कहा कि माता बूढ़ी हैं, उनकी देखभाल करना और भरत का रुख देखकर काम करना। वे कुल के भी स्वामी होंगे और राजा भी। उनके सामने मेरी प्रशंसा भूलकर भी न करना, क्योंकि प्रभुतावाले लोग अपने सामने दूसरों की प्रशंसा सहन नहीं कर सकते। चौदह वर्ष बाद हम तुम फिर मिलेंगे।

इस समाचार से सीता व्याकुल हो गई, फिर सँभलकर बोली—मुझे छाया की भाँति तुम्हारे साथ रहने का पिता से आदेश मिला है। इसे तुम जानते ही हो। मैं भी वन को चलूँगी। राम ने उन्हें बहुत तरह से समझाया-बुझाया। जब वे किसी तरह न मानीं, तो राम ने कहा—तुरंत चलने के लिए तैयार हो जाओ। तभी लक्ष्मण भी वहाँ आ गए और उन्होंने भी साथ चलने का आग्रह किया। अंत में राम को उन्हें भी साथ चलने की अनुमति देनी पड़ी। लक्ष्मण से उन्होंने कहा, माता से अनुमति लेकर गुरु वशिष्ठ के घर जाओ। वहाँ से मेरे सुरक्षित दिव्य अस्त्र-शस्त्र ले आओ।

माता से अनुमति लेकर और गुरु के यहाँ से अस्त्र-शस्त्र लेकर लक्ष्मण लौट आए। इधर श्रीराम ने अपना और सीता का सारा सामान ब्राह्मणों और सेवकों को बाँट दिया। सीता और लक्ष्मण को लेकर वे पिता के पास विदाई के लिए चल दिए।

राम वन-गमन का समाचार सारी अयोध्या में फैल चुका था। राम-लक्ष्मण और सीता को राजा के महल की ओर जाते देखकर नगरवासी दशरथ और कैकेयी को धिक्कारने लगे। उधर महल में राजा दुख से तड़प रहे थे। उन्होंने कौशल्या और सुमित्रा को अपने पास बुला लिया था। राम ने सबसे विदा माँगी। राजा ने उठने की

कोशिश की, पर वे गिर पड़े और मूर्च्छित हो गए। जब उनकी मूर्च्छा जगी तो राम ने विदा माँगीऔर कहा– सीता और लक्ष्मण भी मेरे साथ जाने का आग्रह कर रहे हैं। हम लोगों के लिए आप शोक न करें।

राजा दशरथ ने कहा–बेटा, कैकेयी ने मेरी मति हर ली है। तुम मुझे पकड़कर बंदीघर में डाल दो और अयोध्या के राजा बन जाओ। राम ने बड़ी नम्रता से कहा–पिताजी, मुझे राज्य लोभ बिल्कुल नहीं है। यदि मैं वन न जाऊँ तो आपका वचन भी मिथ्या होगा। रघुकुल की रीति मिट जाएगी। मुझे वन जाने दीजिए। कैकेयी बीच-बीच में राजा दशरथ को फटकारती जाती थी। राम को छाती से लगाकर राजा मूर्च्छित हो गए। इतने में कैकेयी वल्कल वस्त्र ले आई और राम से बोली– लो, इन्हें पहनकर वन को जाओ।

सीय सकुच बस उतरु न देई, सो सनि तमकि उठी कैकेई।
लोग बिकल मुरुछित नरनाहू, काह करिअ कछु सूझ न काहू।।



राम ने राजसी वस्त्र उतार दिए और वल्कल वस्त्र पहन लिए। सीता को भी कैकेयी ने तपस्विनी के वस्त्र दिए। यह देखकर लोग राजा दशरथ और कैकेयी को तरह-तरह से धिक्कारने लगे। सीता से लिपटकर रानियाँ रोने लगीं। राजा भी अपना सिर नीचे कर रोने लगे। सुमित्रा ने लक्ष्मण को आशीर्वाद दिया और कहा– "सीता-राम को ही तुमअपना माता-पिता समझना। इनकी रक्षा के लिए अपने प्राण देने से भी न हिचकना। जाओ, वीर पुत्र! जाओ! निश्चिंत होकर सीता-राम के साथ जाओ।" राम ने तब फिर अनुमति माँगी और सीता तथा लक्ष्मण को साथ लेकर वे चल दिए। अंतःपुर की सब स्त्रियाँ रोती-बिलखती उनके पीछे-पीछे चलीं।

नगर के द्वार पर सुमंत रथ लिए खड़े थे। राम, लक्ष्मण और सीता रथ पर चढ़ गए। राम के आदेश से सुमंत ने वेग से रथ हाँका–प्रजा और रानियाँ रथ के पीछे दौड़ने लगीं। 'राम! राम!' मेरे राम! हा लक्ष्मण! हा सीता!' की पुकार दसों दिशाओं में फैल गई। अब राजा दशरथ को रथ की धूल भी दिखाई नहीं देती थी। राजा हताश होकर गिर पड़े। रानियाँ उन्हें उठाकर कौशल्या के भवन में ले गईं। राजा कभी बेसुध हो जाते और कभी 'राम! राम!' कह चिल्ला उठते। सारी अयोध्या नगरी शोक-सागर में डूब गई। घर, बाजार और गलियों में सन्नाटा छा गया। मनुष्यों की तो क्या पशु-पक्षियों ने भी खाना-पीना छोड़ दिया।

उधर नगरवासियों की एक भारी भीड़ रथ के पीछे-पीछे दौड़ रही थी। समझाने-बुझाने पर भी जब लोग न लौटे, तब राम-लक्ष्मण भी रथ से उतर कर उनके साथ पैदल ही चलने लगे। संध्या होते-होते वे तमसा नदी के किनारे पहुँचे और उन्होंने वहीं रात बिताने का निश्चय किया। सीता और राम माता-पिता की याद करते हुए

तृण-शय्या पर विश्राम करने लगे। कुछ दूर पर लक्ष्मण धनुष-बाण लेकर पहरा देने लगे। सुमंत भी उनके साथ जा बैठे।

थके-माँदे पुरवासी घोर निद्रा में सो गए। पहर रात रहते ही राम उठे और सुमंत से बोले– तात! लोगों का कष्ट मुझसे नहीं देखा जाता। शीघ्र रथ तैयार करो और इस प्रकार रथ हाँको कि जगने पर लोगों को पता न लगे कि रथ किधर गया। सुमंत ने ऐसा ही किया। सवेरा होने पर जब लोगो की आँखें खुलीं तो देखा, कि राजकुमार नहीं हैं।वे इधर-उधर दौड़कर उन्हें खोजने लगे। जब कहीं पता न लगा तो निराश होकर नगर को लौट गए।

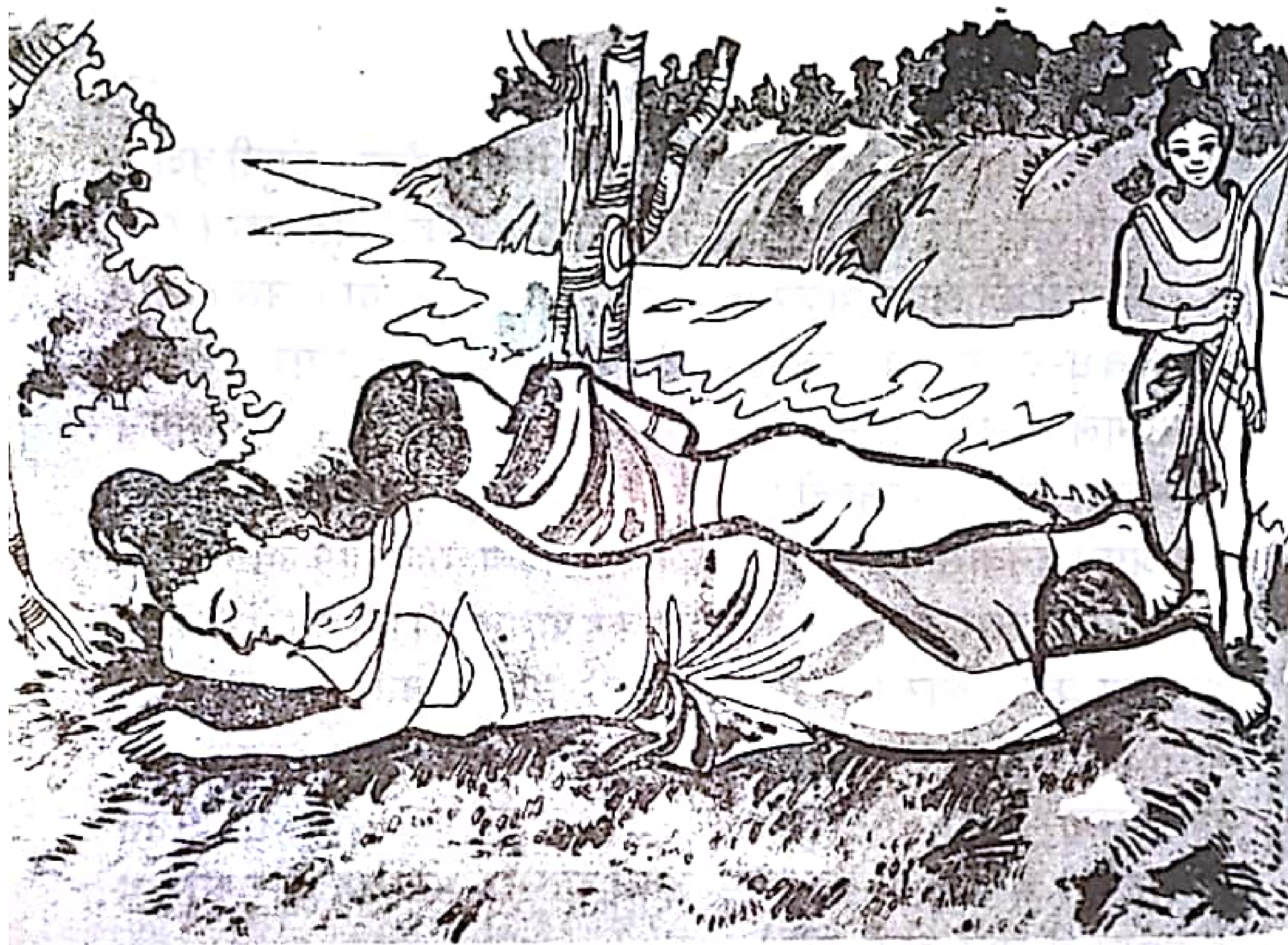
वन-यात्रा

रामचन्द्र जी का रथ दक्षिण की ओर चला और सवेरा होते-होते काफी दूर निकल गया। हरे-भरे खेतों और फले-फूले वनों को देखते-देखते राम-लक्ष्मण-सीता गोमती नदी के किनारे पहुँचे। उसे पार कर वे आगे बढ़े और सई नदी तक जा पहुँचे। सई को पार कर वे थोड़ी देर के लिए रुक गए। कौशल राज्य की सीमा वहाँ समाप्त होती थी। राम ने मुड़कर जन्मभूमि की ओर देखा। आँखों में आँसू भर वे सुमंत से बोले– तात! न जाने वह दिन कब आएगा जब मैं अपने माता-पिता से फिर मिलूँगा और सरयू के पवित्र तट पर घूमूँगा। अयोध्या नगरी की ओर मुँह करके राम हाथ जोड़कर खड़े हो गए और कहने लगे– जननी जन्मभूमि! मेरे अपराध क्षमा करना। चौदह वर्ष के बाद ही अब तुम्हारे दर्शन कर सकूँगा। तभी सीमा प्रान्त के बहुत-से नर-नारी वहाँ इकट्ठे हो गए। वे राजा दशरथ को धिक्कारते थे और कहते थे– ऐसे पापी राजा के राज्य में रहना ठीक नहीं। चलो राम के साथ चलें। लोगों की ऐसी प्रीति देखकर राम की आँखें डबडबा आईं। सबको उन्होंने समझाया-बुझाया और वे फिर आगे बढ़े। शाम होते-होते

उनका रथ गंगा के किनारे शृंगवेरपुर गाँव में जा पहुँचा। इंगुदी वृक्ष के नीचे राम ठहर गए। शृंगवेरपुर में निषादों का राजा गुह रहता था। राम के आने की खबर पाकर वह स्वागत के लिए आया। उसके साथ अनेक बंधु-बांधव और सेवक भी थे। गुह को आते देख राम उठे और उससे गले मिले। गुह ने कहा—मेरा सौभाग्य है कि आप यहाँ आए। शृंगवेरपुर को भी अपना ही घर समझें और सुखपूर्वक रहें। श्रीराम ने जब अपने वनवास की बात बताई तो उसको बहुत दुःख हुआ। उसने अपना राज्य राम के चरणों में अर्पित कर प्रार्थना की कि शृंगवेरपुर पर ही राज्य करें। श्रीराम ने निषादराज के प्रति कृतज्ञता प्रकट की। वे अपने व्रत पर दृढ़ रहे। उस दिन भी उन्होंने केवल जल पिया और वे तृण-शय्या पर ही सोए। लक्ष्मण पहरे पर बैठ गए। गुह और सुमंत भी लक्ष्मण के पास ही बैठ गए। उनमें रातभर अयोध्या और श्रीराम के विषय में बातें होती रहीं।

अगले दिन श्रीराम ने सुमंत से कहा—मंत्रिवर! अब आप अयोध्या लौट जाइए। पिताजी और माताओं के चरणों में हमारा प्रणाम कहिए और उन्हें बता दीजिए कि चौदह वर्ष बाद हम अवश्य लौट आएँगे। भरत से कह दीजिए कि सब माताओं से एक-सा व्यवहार करें और राजा को प्रसन्न रखें। इस प्रकार सुमंत को राम ने समझा-बुझाकर विदा किया।

तब राम ने बरगद का दूध मँगाकर जटाएँ बनाईं। गुह से विदा लेकर वे सीता और लक्ष्मण के साथ नाव में बैठे और गंगा पार कर वत्सदेश में पहुँचे। आगे-आगे लक्ष्मण, बीच में सीता और सबसे पीछे राम—इस क्रम में वे दुर्गम मार्गों पर चलते हुए आगे बढ़े। शाम को फिर एक पेड़ के नीचे ठहर गए। सब लोगों ने कंद-मूल फल खाए। तब राम ने लक्ष्मण से कहा— राज्य की मुझे कोई चिन्ता नहीं। मुझे माता



की चिन्ता है, उनको मुझसे दु:ख ही मिला। मैं कोई और सेवा न कर सका। लक्ष्मण तुम सवेरा होते ही अयोध्या लौट जाओ और माता कौशल्या और माता सुमित्रा की देखभाल करो। लक्ष्मण ने बड़ी देर तक राम को समझा-बुझाकर ढाढ़स बँधाया। सीता-राम के सो जाने पर लक्ष्मण पहरे पर बैठ गए।

अगले दिन वे फिर चले और गंगा-जमुना के संगम पर महर्षि भरद्वाज के आश्रम में पहुँचे। भरद्वाज ने उनको आदरपूर्वक ठहराया। अगले दिन भरद्वाज से विदा लेकर राम-लक्ष्मण और सीता आगे बढ़े। यमुना नदी पार कर, दो दिन की यात्रा के बाद वे चित्रकूट जा पहुँचे। चित्रकूट के हरे-भरे पर्वत राम को बड़े अच्छे लगे। उन्होंने लक्ष्मण से कहा– अब हम यहीं कुछ दिन तक निवास करें। लक्ष्मण ने मंदाकिनी नदी के किनारे एक सुंदर पर्णकुटी बना दी। राम, लक्ष्मण और सीता वहाँ रहने लगे।

अयोध्या में हाहाकार

सुमंत खाली रथ लेकर अयोध्या पहुँचे। लोग दौड़-दौड़कर पूछते— मंत्रीवर, राम कहाँ है? राम-लक्ष्मण और सीता को कहाँ छोड़ आए? सुमंत नीची गर्दन किए बिना बोले ही राजमहल की ओर बढ़ते गए। उन्हें अकेला आते देखकर रानियाँ भी जोर-जोर से रोने लगीं। राजा ने भी पूछा— बेटा राम कहाँ है? पुत्री सीता न जाने कैसे रहती होगी? राजा अनाथ की तरह रोने लगे। सुमंत ने भी रोते-रोते सब हाल कह सुनाया। कौशल्या छाती पीट-पीटकर रोने लगी। राजा दशरथ ने अपने अपराध के लिए कौशल्या से क्षमा माँगी।

राम को अयोध्या से गए छह दिन हो गए थे। तब से राजा दशरथ भी यों ही पड़े थे। आधी रात होने को आई। तब उनको श्रवणकुमार के पिता द्वारा दिए गए शाप की याद आई। उन्होंने कौशल्या से कहा— एक बात मैंने तुमको अब तक नहीं बताई। आज बताता हूँ। हमारे-तुम्हारे विवाह के पहले की घटना है, एक बार वर्षा ऋतु में सरयू नदी के किनारे मैं शिकार खेलने गया। उन दिनों शब्दवेधी बाण चलाने का मुझे बड़ा शौक था। अँधेरा हो चला था। एकाएक नदी में से हाथी के पानी पीने की सी आवाज आई। उसी को लक्ष्य करके मैंने बाण चला दिया। तभी मनुष्य के तड़पने की आवाज आई। मैं घबराया हुआ वहाँ पहुँचा तो देखा कि एक तपस्वी बालक घायल हुआ कराह रहा है। पास में एक घड़ा भी पड़ा है। वह रोते-रोते बोला, मेरे अंधे माँ-बाप प्यासे उस आश्रम में बैठे मेरी राह देख रहे होंगे। कृपा कर उनके लिए पानी लेते जाइए। इतना कहकर उसने दम तोड़ दिया। मैं जल लेकर आश्रम में गया। मेरी आहट पाकर उसके बूढ़े बाप बोले, बेटा श्रवण इतनी देर कहाँ लगाई? मेरी जीभ लड़खड़ा रही थी। मैं डरते-डरते बोला— मैं श्रवणकुमार नहीं हूँ,

अयोध्या का राजा दशरथ हूँ। गलती से मेरा बाण उसे लग गया है और अब वह इस संसार में नहीं है। यह सुनकर वे करुण विलाप करने लगे। मेरे साथ वे नदी के तट तक आए। उन्होंने पुत्र को जलांजलि दी और मुझे शाप दिया, "हे राजन्! पुत्र के वियोग में जैसे आज हम मर रहे हैं, वैसे ही तड़प-तड़प कर तुम भी मरोगे," और उन दोनों ने उसी समय प्राण त्याग दिए।

कौशल्या ! लगता है उस शाप के सच होने का समय अब आ गया है। मेरे प्राण मानो कोई खींच रहा है। हाय, मैं मरते समय प्यारे पुत्र का मुँह भी न देख सका। मैं बड़ा अभागा हूँ। अपने किए का फल भोग रहा हूँ। हा राम ! हा राम ! कहते हुए दशरथ ने प्राण त्याग दिए। रानियाँ राजा के बलपौरुष का वर्णन करती हुई करुण स्वर में विलाप करने लगीं।

मंत्रियों ने राजा के शव को तेल से भरे कड़ाह में रखवा दिया। फिर मंत्रिपरिषद् ने विचार करके भरत को बुलवाने का निश्चय किया। हवा की गति से चलने वाले घोड़ों पर दूत भेजे गए। उनसे कह दिया गया था कि कैकेय देश में पहुँचकर केवल इतना कहें कि आवश्यक कार्यवश गुरु ने भरत को तुरंत बुलवाया है।

ननिहाल में भरत का मन उचट रहा था। तरह-तरह की बातें उनके मन में उठती थीं। जैसे ही उनको दूतों से संदेश मिला, वे नाना-मामा से विदा लेकर शत्रुघ्न के साथ अयोध्या को चल पड़े।

नदी, पर्वत लाँघते हुए आठवें दिन वे अयोध्या आ पहुँचे। नगर में चारों ओर सन्नाटा था। बाजार बंद थे। नगरवासी भरत को देखकर मुँह फेर लेते थे। भरत घबराए हुए अपनी माता के महल में गए और

ननिहाल का कुशल-समाचार बताकर पिता और भाई राम के बारे में पूछने लगे। कैकेयी ने हँसकर कहा—तुम्हारे पिता तो स्वर्ग चले गए। वे इस पृथ्वी का सुख भोग चुके थे। उनके बारे में चिन्ता न करो। भरत फूट-फूट कर रोने लगे। फिर उन्होंने पूछा— भाई राम कहाँ हैं? कैकेयी ने हँस-हँस कर अपने वरदान तथा राम-लक्ष्मण और सीता के वन जाने की सारी बातें कह सुनाईं। वह बोली— बेटा भरत, मैंने तुम्हारे लिए ही यह सब कुछ किया है। अब चिन्ता छोड़कर अयोध्या की राज्य-लक्ष्मी का भोग करो।

भरत को माता पर बड़ा रोष आया। वे बोले— पापिनी! तूने यह क्या किया? इक्ष्वाकु वंश की तूने नाक काट दी। ऐसा ही करना था तो मुझे जन्मते ही क्यों न मार डाला। इस बीच राज्य के मंत्री भी वहाँ आ गए थे। उनके सामने भी उन्होंने कैकेयी को बहुत भला-बुरा कहा। वे बोले—मंत्रियो! आप भी सुन लें, मेरी माँ ने जो कुछ किया है उसमें मेरा कोई हाथ नहीं, मैं शपथपूर्वक कहता हूँ। यह कहकर भरत तुरंत ही



माता कौशल्या के पास चल दिए और उनसे लिपटकर बच्चे की तरह बिलखकर रोने लगे। माता ने उन्हें धीरज बँधाया। फिर वे भी पछाड़ खाकर भूमि पर गिर पड़ीं। भरत ने माता को भी तरह-तरह से सांत्वना दी। रातभर भरत, पिता और भाई राम की याद करके रोते रहे। उन्होंने माता के सामने सैकड़ों तरह की सौगंध खाई और कहा कि जो पाप कर्म कैकेयी ने किया है उसका मुझे पता भी नहीं। जिसकी सम्मति से यह हुआ हो, उसकी बुरी गति हो।

सवेरा होने पर राजा दशरथ का चंदन की चिता पर दाह-संस्कार किया गया। भरत ने सब अंतिम संस्कार गुरु के बताए अनुसार विधिवत् किया। अगले दिन मंत्रियों और नगरवासियों को बुलाकर भरत ने कहा—अयोध्या का राज्य सबसे बड़े भाई राम का है। हम आप सभी उन्हीं के हैं। राम को लौटा लाने के लिए मैं कल ही चित्रकूट जाऊँगा। आप भी चलें। माताएँ भी चलेंगी। प्रजा भी चलेगी और साथ में चतुरंगिणी सेना भी रहेगी। गुरु वशिष्ठ जी से भी मैं चलने के लिए प्रार्थना करूँगा।

भरत की चित्रकूट-यात्रा

अयोध्या की चतुरंगिणी सेना लेकर मंत्रियों और माताओं सहित भरत चित्रकूट को चल दिए। नगर के धनी-मानी व्यक्ति भी साथ थे। सेना के चलने से सूने मार्ग कोलाहल से भर गए और आकाश में इतनी धूल छा गई कि सूरज तारे की भाँति टिमटिमाने लगा। शाम तक वे शृंगवेरपुर जा पहुँचे, वहीं गंगा-तट पर सेना ने पड़ाव डाल दिया।

निषादराज गुह ने सेना की पताकाओं से जान लिया कि यह अयोध्या की चतुरंगिणी सेना है। उसनें अपने साथियों से कहा कि



मालूम होता है कि भरत के ऊपर अब राजमद सवार हो गया है। राम को वन में मारकर वे अकंटक राज करना चाहते हैं। यह तो मैं जीते-जी नहीं होने दूँगा। वह बोला– भाइयों, मरने-मारने के लिए तैयार हो जाओ। आज भरत की सेना से लोहा लेना है। मैं जानता हूँ कि हम लोग उसका मुकाबला किसी भी प्रकार नहीं कर सकते। परंतु हमारा धर्म है कि प्राण रहते उसको गंगा पार न होने दें। एक न एक दिन मरना तो सबको है ही। फिर राम का काम, रणभूमि में वीरगति और गंगा का किनारा, इससे बढ़कर और क्या हो सकता है। हमारे पास पाँच सौ नावें हैं। हर नाव में सौ-सौ सैनिक बैठ जाएँ और नाके घेर लें। मैं आगे जाकर भेद लेता हूँ। अगर भरत भाई से मिलने जा रहे होंगे, तो हम उनकी सहायता करेंगे और अगर उनके मन में कोई पाप है तो आज गंगा में रक्त की धार बहेगी। मेरे संकेत की प्रतीक्षा करना।

इतना कहकर निषादराज ने बहुत-सा भेंट का सामान लिया और वह आगे बढ़ा। भरत निषादराज के प्रेम को जानते थे। वे ललक कर

उससे गले मिले। भरत के मन की बात गुह ने जान ली। राम-लक्ष्मण के विषय में दोनों में बहुत देर तक बातें होती रहीं। राजा दशरथ की मृत्यु के समाचार से निषादराज दुखी हुए। निषाद के साथ भरत उस इंगुदी वृक्ष के नीचे गए जहाँ राम ने रात बिताई थी। भरत ने उस स्थान को प्रणाम किया और वहाँ की धूल अपने माथे से लगाई। गुह ने लौटकर साथियों को सब समाचार सुनाए।

अगले दिन प्रात:काल पाँच सौ नावें सेना को पार उतारने के लिए घाट पर लग गईं। सेना-सहित भरत ने गंगा पार की। नाव पर बैठने के पहले भरत ने भी राम की तरह बरगद के दूध से जटा बनाई और वल्कल वस्त्र पहन लिए। गुह को साथ लेकर वे प्रयाग की ओर बढ़े। भरत के साथ इतनी बड़ी सेना देखकर महर्षि भरद्वाज को भी शंका हुई। परंतु भरत के व्यवहार से उनका संदेह दूर हो गया। भरद्वाज ने भरत को यह भी बता दिया कि राम किस मार्ग से चित्रकूट गए हैं। वह रात भरत ने भरद्वाज आश्रम में ही बिताई।

प्रात:काल होते ही भरत का दल चित्रकूट के लिए चल पड़ा। चलते-चलते चित्रकूट पर्वत उन्हें दिखाई दिया। सारा वन प्रदेश कोलाहल से भर गया। वन के जीव-जंतु, पशु-पक्षी इधर-उधर भागने लगे। कुछ दूरी पर धुआँ उठते देख गुह ने अनुमान लगाया कि वहीं कहीं राम की कुटी होगी।

इधर राम को भी आकाश में धूल उड़ती दिखाई दी। पशु-पक्षी भी भाग रहे थे। अब कुछ-कुछ कोलाहल भी समीप आता सुनाई पड़ने लगा। राम ने लक्ष्मण से कहा—भाई ऊँचे वृक्ष पर चढ़कर देखो तो क्या बात है। लक्ष्मण ने चढ़कर देखा—दूर पर चतुरंगिणी सेना आ रही है। उन्होंने पताकाएँ देख कर जान लिया कि अयोध्या की सेना है। वे बोले—"आर्य ! जानकी माता को सुरक्षित स्थान में पहुँचाकर

धनुष-बाण उठाइए। मालूम पड़ता है, भरत हमको वन में भी नहीं रहने देगा। आज मैं सबका बदला लूँगा। भरत को भाई समेत समर भूमि में सुलाकर कैकेयी और मंथरा को भी जिन्दा नहीं छोड़ूँगा।" पेड़ से उतर कर, लक्ष्मण धनुष-बाण लेकर तैयार हो गए। उन्हें उत्तेजित देखकर राम बोले—"लक्ष्मण, वीर पुरुष धैर्य और समझदारी से काम लेते हैं। उतावली न करो। भरत साधु स्वभाव के हैं। मेरा मन कह रहा है कि वे मुझसे मिलने ही आ रहे हैं, लड़ने नहीं। तुम यह जानते ही हो कि मुझे राज्य पाने का तनिक भी लोभ नहीं है, भरत जैसे प्रिय भाई को त्यागकर मैं स्वर्ग को भी नहीं चाहता। तुम भरत के प्रति अनुचित भावना को अपने मन में मत लाओ। मुझे भरत पर पूरा भरोसा है।" भाई राम के ये वचन सुनकर लक्ष्मण शांत हो गए।

इधर भरत सेना को ठहरा कर शत्रुघ्न के साथ आगे बढ़े। उन्होंने देखा कि तेजस्वी राम एक शिला पर बैठे हैं। पास में ही सीता और लक्ष्मण भी बैठे हैं। वे व्याकुल होकर राम के चरणों पर गिर पड़े। भरत को देखकर राम भी हड़बड़ा कर उठे। कहीं धनुष गिरा, कहीं बाण और कहीं उत्तरीय। उन्होंने भरत को उठाकर छाती से लगा लिया। दोनों की आँखों में प्रेम की धाराएँ बहने लगीं। भाई से मिलकर भरत ने सीताजी के चरणों में प्रणाम किया। सीताजी का आशीर्वाद पाकर भरत को बड़ा संतोष हुआ, फिर वे लक्ष्मण से गले मिले। शत्रुघ्न ने भी राम-लक्ष्मण और सीताजी के चरणों में प्रणाम किया।

गुरु और माताओं के आने का समाचार पाकर राम-लक्ष्मण उनसे मिलने गए। शत्रुघ्न को सीताजी के पास छोड़ दिया। गुरु के चरणों में प्रणाम कर वे माताओं से मिले। अपने कुटुंबियों और

नगरवासियों से भी बड़े स्नेह के साथ मिले। सबको ठहरने का यथावसर प्रबंध करके श्रीराम अपनी कुटी पर लौट आए। सीताजी को मुनि वेश में देखकर माताएँ बड़ी दुखी हुईं। अब कैकेयी भी मन ही मन पछता रही थी। जब पिता की मृत्यु का समाचार राम को मिला तो वे सन्न रह गए और अपने ही को उनकी मृत्यु का कारण जानकर बड़ी देर तक रोते रहे। फिर वे मंदाकिनी पर गए। वहाँ उन्होंने पितृ-तर्पण किया और इंगुदी के फूलों से पिण्ड देते हुए वे बोले—"पिताजी ! आपके वनवासी पुत्र के पास पिंड देने के लिए केवल यही है। इसे ग्रहण कर संतुष्ट हों और आशीर्वाद दें।"

अगले दिन सब लोग राम के पास इकट्ठे हुए। भरत ने राम के चरणों पर सिर रखकर कैकेयी के अपराधों के लिए क्षमा माँगी और अयोध्या लौट चलने की प्रार्थना की। राम ने भरत को हृदय से लगा लिया और कहा, "जो कुछ हुआ इसमें न तो माता कैकेयी का दोष है और न तुम्हारा। जो कुछ होता है वह भगवान् की इच्छा से होता है। सब अपने कर्मों का फल भोगते हैं। जहाँ तक मेरे लौटने की बात है, मैं चौदह वर्ष तक वन में ही रहकर पिता के वचन का पालन करूँगा। जिन पिता ने अपने वचन के लिए प्यारे पुत्र को वन भेज दिया और अपने प्राण भी दे दिए, उनके मरने के बाद मेरे लिए और तुम्हारे लिए भी यही उचित है कि उनके वचन का पालन करें। तुम अयोध्या में रहकर प्रजा-पालन करो और मैं चौदह वर्ष तक वन में वास करूँ। चारों भाई अपना-अपना कर्तव्य करें और पिता के सत्य धर्म की रक्षा करें।" इस पर भरत ने कहा— "आपके स्थान पर चौदह वर्ष तक मैं वन में रहूँगा। मैंने भी मुनि-वेश बना लिया है।"

माताओं ने, गुरुजनों ने और नगरवासियों ने भी अपनी-अपनी तरह से राम से बहुत कुछ कहा, पर राम किसी तरह लौटने को तैयार

नहीं हुए। उधर भरत भी हठ कर रहे थे। तब राम ने कहा, ''कदाचित् तुम्हें पता न होगा। तुम्हारे नाना ने जब माता कैकेयी का विवाह पिताजी के साथ किया, तब राजा से यह वचन ले लिया था कि उनके बाद कैकेयी का पुत्र ही अयोध्या का राजा होगा। अतः राज्य तुम्हारा ही है। फिर माता कैकेयी को दो वरदान भी माँगने को कहा था। यह तुमने सुना ही होगा। इसलिए तुम बिना किसी संकोच के अयोध्या पर राज करो।''

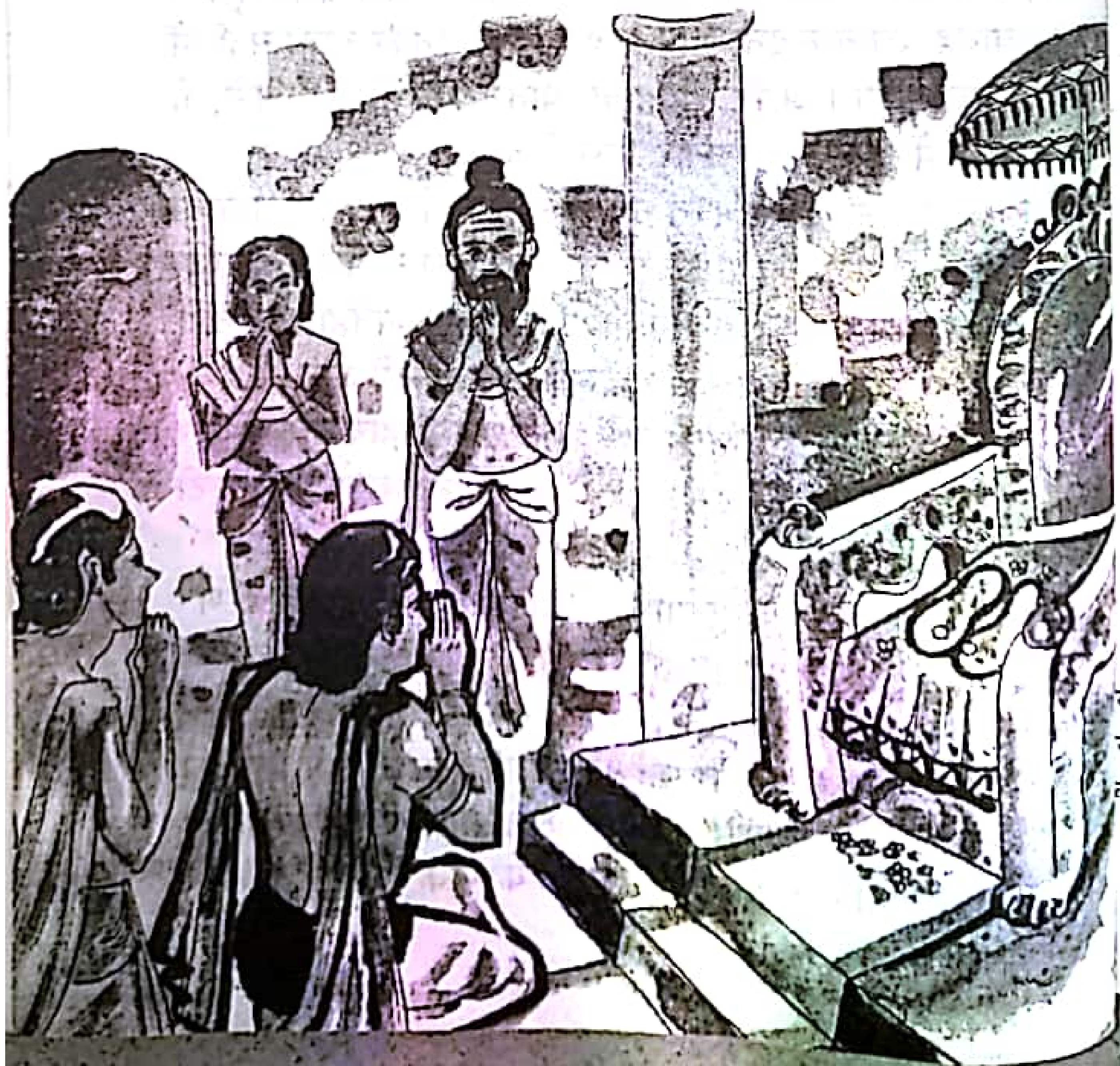
जब राम किसी तरह लौटने को तैयार नहीं हुए तब भरत ने स्वर्णजड़ित खड़ाऊँ राम को पहना कर कहा, ''अब इन्हें मुझे दे दीजिए। चौदह वर्ष तक इनका ही राज रहेगा। इनकी आज्ञा से ही मैं राज-काज चलाऊँगा। अगर चौदह वर्ष बीतने पर आप न आएँगे, तो अगले दिन ही मैं आग में जलकर प्राण दे दूँगा।''

राम की खड़ाऊँ लेकर भरत ने सिर से लगा ली। राम ने भरत से कहा–''नीतिपूर्वक प्रजा का पालन करना। प्रजा को सुखी रखना राजा का सबसे पहला कर्तव्य है। सब माताओं से समान व्यवहार करना। माँ कैकेयी को भी किसी तरह दुःख न देना। तुमको मेरी और सीता की सौगंध है।'' गुरुजनों और माताओं को प्रणामकर उन्होंने सबकी ओर आँखों में आँसू भरकर देखा। इस तरह भरत को विदा करके राम कुटी में लौट आए।

समाज सहित भरत अयोध्या को लौट चले। राम की चरण-पादुकाओं को एक सुसज्जित हाथी पर सिंहासन में स्थापित कर वे अयोध्या को चल पड़े। चार दिन की यात्रा कर वे अयोध्या पहुँचे। राम की खड़ाऊँ को उन्होंने राज सिंहासन पर स्थापित किया। मंत्रियों को उन्होंने राज-काज सौंपकर कहा कि राम की इन चरण पादुकाओं का ही शासन रहेगा। आप लोग यत्नपूर्वक ऐसे काम करें जिससे प्रजा में

सुख-समृद्धि बढ़े। माताओं की देखभाल के लिए उन्होंने शत्रुघ्न को हिदायतें दे दीं। अयोध्या का सब प्रबंध करके भरत नगर के बाहर नंदिग्राम में मुनिवेश बनाकर रहने लगे। वहीं से वे आवश्यक देखभाल करते।

प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्हीं, सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।
चरनपीठ करुनानिधान के, जनु जुग जामिक प्रजा प्रान के।।



भरत के चले जाने के बाद राम-लक्ष्मण और सीता मंदाकिनी नदी के किनारे-किनारे दक्षिण की ओर बढ़े और अत्रि ऋषि के आश्रम में पहुँचे। इन तीनों ने ऋषि को प्रणाम किया। ऋषि ने भी उनको संतान की तरह अपनाया। उनकी पत्नी भगवती अनसूया तपस्या और पतिव्रत धर्म के लिए प्रसिद्ध थीं। सीताजी ने आश्रम के भीतर जाकर उनके चरण छुए। अनसूया ने पुत्र-वधू की भाँति उनसे प्यार किया। सती अनसूया ने सीताजी को पति-सेवा का उपदेश दिया। सीताजी की पति-सेवा से प्रसन्न होकर कुछ माँगने को भी उन्होंने कहा। सीताजी बोलीं– "आपकी दया से मुझे सब कुछ मिला है। अब क्या माँगूँ।" इस उत्तर से अनसूया प्रसन्न हुईं और उन्होंने सीताजी को दिव्य माला, दिव्य वस्त्र और आभूषण देकर कहा कि ये न तो कभी मैले होंगे और न कभी नष्ट होंगे। सीताजी ने उन्हें ग्रहण किया। रात को उसी आश्रम में उन्होंने विश्राम किया।

प्रश्न

1. राजा दशरथ ने राम के राज्याभिषेक की किस प्रकार तैयारी की ?
2. भरत की अनुपस्थिति में ही राजा दशरथ राम का राज्याभिषेक क्यों करना चाहते थे ?
3. राजा दशरथ की मृत्यु का क्या कारण था ?
4. भरत ने राजा होना क्यों स्वीकार नहीं किया ? राम को मनाने वे सबको लेकर चित्रकूट क्यों गए ?
5. निषादराज गुह से राम किस प्रकार मिले ? राम के चरित्र के विषय में इससे क्या पता चलता है ?
6. राम को लौटाने के लिए भरत ने क्या कहा ? राम क्यों नहीं लौटे ?

बोध-परीक्षा और विचार

राम, लक्ष्मण और भरत जैसे चरित्रों को देखते हुए आपके मन में क्या कर्त्तव्य-बोध होता है ?



3. अरण्य-कांड

ऋषि-मुनियों से भेंट

अत्रि मुनि से विदा लेकर राम ने दंडक वन में प्रवेश किया। बड़ा हरा-भरा और घना वन था। भाँति-भाँति के जीव-जंतुओं और पशु-पक्षियों की आवाजें सुनाई पड़ रही थीं। जहाँ-तहाँ मुनियों के आश्रम थे, जिनमें से वेद-ध्वनि आती थी।

श्रीराम के आने का समाचार पाकर ऋषि-मुनि बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने राम को अपना दुःख बताया। मुनि बोले—'यहाँ वन में अनेक राक्षस तरह-तरह का रूप बनाकर घूमते रहते हैं और अवसर पाकर हम लोगों पर हमला कर देते हैं।" राम ने उनकी बातें ध्यान से सुनीं और उन्हें ढाढ़स दिया। वह रात उन्होंने मुनियों के साथ आश्रम में ही बिताई।

अगले दिन राम, लक्ष्मण और सीता ने और भी घने वन में प्रवेश किया। कुछ दूर जाने पर एक विशाल शरीर और लंबी बाहोंवाला दानव मिला। उसने झपटकर सीता को पकड़ लिया और राम-लक्ष्मण से डपट कर बोला —'ढोंगियो! तुम कौन हो? मुनि का भेष बना लिया है और ऐसी सुंदर स्त्री लिए घूम रहे हो! यह मेरे काम की है, भाग जाओ।'

राम ने पूछा—'तुम कौन हो ?' वह गरज कर बोला—'मैं हूँ महाबली विराध हूँ। जल्दी भागो, नहीं तो फाड़कर खा जाऊँगा।' राम-लक्ष्मण ने उस पर बाणों की वर्षा शुरू कर दी। विराध क्रोध से पागल हो गया। बाणों की वर्षा की कुछ भी परवाह न करके वह

राम-लक्ष्मण पर झपटा। दोनों भाइयों को अपनी लंबी भुजाओं में जकड़कर वह एक ओर को चल पड़ा। यह देखकर सीता जोर-जोर से रोने-चिल्लाने लगी। राम-लक्ष्मण ने उसके दोनों हाथ मरोड़ कर तोड़ डाले। तब राक्षस जमीन पर गिर पड़ा। राम-लक्ष्मण ने एक बहुत बड़ा गड्ढा खोदा और ठोंक-पीटकर उसे जिन्दा ही जमीन में गाड़ दिया।

वहाँ से चलकर राम शरभंग मुनि के आश्रम में पहुँचे। शरभंग मुनि ने कहा–''आपके दर्शन से मेरी लालसा पूरी हुई। आपने अच्छा किया कि यहाँ आ गए। ऋषि-मुनियों की रक्षा हो जाएगी। आपको देखने के बाद अब मैं और कुछ नहीं देखना चाहता।'' इतना कहकर शरभंग मुनि जलती हुई चिता में समा गए। अनेक ऋषि-मुनि वहाँ जमा हो गए। उन्होंने हड्डियों के ढेर दिखाकर राम से कहा कि ''ये ऋषियों के कंकाल हैं, जिनको राक्षसों ने खा डाला है।'' राम ने कहा, ''डरें नहीं, मैं राक्षसों का नाश कर दूँगा।''

अब राम सुतीक्ष्ण मुनि के आश्रम में पहुँचे। सुतीक्ष्ण मुनि अगस्त्य ऋषि के शिष्य थे और भगवान के बड़े भक्त थे। श्रीराम का स्वागत-सत्कार कर उन्होंने भी राक्षसों के अत्याचार की कहानियाँ राम को सुनाईं। उस दिन राम-लक्ष्मण और सीता सुतीक्ष्ण के आश्रम में ही टिक गए।

अगले दिन वे फिर चल पड़े और दंडक वन के विभिन्न स्थानों में रहे। सीताजी कहतीं, ''आर्य पुत्र ! वन में रहकर राक्षसों से वैर मोल लेना मुझे ठीक नहीं जान पड़ता।'' राम ने उत्तर दिया– ''भद्रे ! हम लोग क्षत्रिय हैं। हमारा धर्म है पीड़ितों की रक्षा करना, शरण में आए हुए की मदद करना। ऋषियों को मैं भगवान-भरोसे कैसे छोड़ सकता हूँ !''

इस प्रकार दंडक वन में घूमते-घूमते दस वर्ष बीत गए। लौटकर वे फिर सुतीक्ष्ण मुनि के आश्रम में आ गए। सुतीक्ष्ण ने उन्हें अगस्त्य ऋषि से मिलने का परामर्श दिया।

सुतीक्ष्ण के आश्रम से पाँच योजन दूर आर्य श्रेष्ठ अगस्त्य ऋषि का आश्रम था। राम, लक्ष्मण और सीता उसी ओर चल दिए। मार्ग में श्रीराम ने बताया कि भगवान अगस्त्य ही सबसे पहले विन्ध्याचल को पारकर यहाँ आए। उन्होंने ही दक्षिण दिशा का द्वार खोला। उनसे राक्षस डरते हैं और उन्हीं के भरोसे दूसरे ऋषि यहाँ आ पहुँचे हैं। उनके दर्शन कर आज हम धन्य होंगे। उन्हीं की आज्ञा से हम वनवास का शेष समय काटेंगे।

श्रीराम के आने का समाचार पाकर अगस्त्य ऋषि बाहर आए। राम, लक्ष्मण और सीता ने उनके चरणों में प्रणाम किया। मुनि ने सबको आसन देकर कंद-मूल-फल खाने को दिए। राम को तरह-तरह के उपदेश देकर बोले—"अच्छा किया, आप यहाँ तक आ गए। मैं स्वयं आपसे मिलना चाहता था। आपका सब हाल मैं जान चुका हूँ। आपकी शक्ति भी जानता हूँ। राक्षसों को मारकर जनस्थान की रक्षा करना आपका काम होगा, जिससे ऋषि-मुनि यहाँ बेखटके जप-तप कर सकें।" यह कहकर अगस्त्य ऋषि ने दिव्य अस्त्र-शस्त्र राम को दिए। विष्णु से प्राप्त महाधनुष दिया, ब्रह्मा से मिला हुआ एक अमोघ बाण दिया और इन्द्र से मिले हुए तरकश दिए जो सदा बाणों से भरे रहते थे। सोने की मूठवाला एक खड्ग भी उन्होंने श्रीराम को दिया। श्रीराम ने इन दिव्य शस्त्रों को सिर से लगा कर ग्रहण किया। तब मुनि ने राम से कहा— "यहाँ से दो योजन दूर गोदावरी नदी के किनारे पंचवटी नामक एक स्थान है। वनवास का शेष समय वहीं व्यतीत करो।"

सीता और लक्ष्मण सहित रामचन्द्रजी पंचवटी की ओर चल दिए। मार्ग में उनको भयंकर शरीरवाला एक गिद्ध मिला। दोनों भाइयों ने समझा कि वह कोई राक्षस है। परंतु गिद्धराज ने उन्हें पहचान लिया और वह मधुर वाणी में बोला, ''मेरा नाम जटायु है। मैं तुम्हारे पिता दशरथ का मित्र हूँ। वनवास में मैं तुम्हारी हर तरह से सहायता करना चाहता हूँ।'' श्रीराम ने पिता के समान उसको आदर दिया और उसको साथ लेकर वे पंचवटी की ओर गए।

खर-दूषण से युद्ध

पंचवटी पहुँचकर लक्ष्मण ने गोदावरी नदी के किनारे बड़ी सुंदर कुटी बना ली। सीताजी को वह कुटी बड़ी अच्छी लगी। सीता और राम दोनों ने लक्ष्मण को अनेक आशीर्वाद दिए। पंचवटी का वास राम को बहुत अच्छा लगा। वे गोदावरी के किनारे-किनारे कुंजों और वनों की शोभा निहारते फिरते। लक्ष्मण उनके लिए फल-मूल इकट्ठा करते और रात में कुटी पर पहरा देते। इस तरह तीन वर्ष हो गए।

एक दिन राम, लक्ष्मण और सीता अपनी पर्ण-कुटी के सामने बैठे हुए थे। इतने में रावण की वहिन शूर्पणखा उधर आ निकली। राम के रूप को देखकर वह विकल हो गई। उसका मन काबू के बाहर हो गया। सुंदर वेश बनाकर, बन-ठनकर वह राम के पास आई और बोली– ''हे रूपनिधान! सुनो! मैं विश्व-विजयी लंका के महाप्रतापी राजा रावण की बहिन हूँ। संसार में मेरे समान कोई दूसरी सुंदरी नहीं है। तीनों लोकों में खोज हुई, पर मेरे अनुरूप कोई वर नहीं मिला। इसलिए अब तक कुमारी ही हूँ। तुम्हें देखकर मन में आया है कि विवाह कर लूँ। मेरी-तुम्हारी जोड़ी अच्छी रहेगी। तुम्हारी यह स्त्री सीता बड़ी अभागिनी और कुरूप है। इसे छोड़ो और मेरे साथ रहकर



पुनि फिरि राम निकट सो आई, प्रभु लछिमन पहँ बहुरि पठाई।
लछिमन कहा तोहि सो बरई, जो तृन तोरि लाज परिहरई।।

महलों में भोग-विलास करो।" राम को उसकी निर्लज्जता बहुत बुरी लगी। परंतु वे हँसकर बोले—'देवी! तुम लक्ष्मण के पास क्यों नहीं जाती? अभी उसके साथ कोई स्त्री नहीं है और सुंदर भी है।' तब वह लक्ष्मण के पास गई। लक्ष्मण ने कहा, "मैं सेवक हूँ। मेरी स्त्री होने पर तुम्हें दासी बनकर रहना पड़ेगा। राम के ही पास जाओ। वे राजा हैं।"

शूर्पणखा फिर राम के पास पहुँची और राम ने उसे फिर लक्ष्मण के पास लौटा दिया। इस प्रकार जब वह कई बार आई-गई तब खिसिया गई और सीता की ओर मुँह फाड़कर दौड़ी। राम का संकेत

पाकर लक्ष्मण ने उसके नाक-कान काट लिए। वह जिधर से आई थी उधर ही रोती-चिल्लाती भाग गई।

रोती-चिल्लाती शूर्पणखा अपने भाई खर और दूषण के पास गई। वे रावण के सौतेले भाई थे और उसी के आदेश से जनस्थान में सेनासहित रहते थे। त्रिशिरा उनका सेनापति था। बहिन की दुर्दशा देखकर खर ने शूर्पणखा से सारा हाल मालूम किया और अपने सैनिकों की एक टोली राम को मारने के लिए शूर्पणखा के साथ भेज दी। राम ने बात ही बात में सब राक्षसों को मार डाला। शूर्पणखा फिर खर के बल-पौरुष को धिक्कारने लगी। एक मनुष्य द्वारा अपना अपमान देखकर खर को बहुत क्रोध आया। अपनी समस्त सेना लेकर उसने राम पर चढ़ाई कर दी। उधर बड़ी भारी सेना आते देखकर राम ने सीताजी को लक्ष्मण के साथ सुरक्षित स्थान पर भेज दिया और स्वयं युद्ध के लिए तैयार हो गए।

राक्षसी सेना ने पंचवटी को चारों ओर से घेर लिया। राम ने देखते-देखते हजारों राक्षसों को मार डाला। दूषण और त्रिशिरा के मारे जाने पर महारथी खर राम से युद्ध करने के लिए आया। खर ने घोर संग्राम किया। एक बार तो उसने राम का कवच ही काट डाला और उनको लहू-लूहान कर दिया। राम ने क्रोधित होकर उसके सारथी और घोड़ों को मार डाला और रथ को चूर-चूर कर दिया। तब खर गदा लेकर घोर संग्राम करने लगा। शत्रु को महाप्रबल देखकर राम ने अगस्त्य ऋषि का दिया हुआ वैष्णव धनुष हाथ में लिया और उस पर इन्द्रबाण रखकर पूरी शक्ति से चला दिया। बाण खर की छाती में लगा। उसका हृदय फट गया। सवा घंटे के युद्ध में अकेले राम ने चौदह सहस्र राक्षस मार डाले। जनस्थान से राक्षसों का भय सदा के लिए मिट गया।

खर के मारे जाने पर देवताओं ने आनंदित होकर फूलों की वर्षा की और तरह-तरह के बाजे बजाए। अगस्त्य ऋषि ने भी आकर रामचन्द्रजी को बधाई दी। इतने में सीता सहित लक्ष्मण भी आ गए। राम को सकुशल देखकर दोनों बहुत हर्षित हुए।

मारीच की माया और सोने का हिरन

शूर्पणखा का बड़ा भाई रावण लंका में राज करता था। वह अपने बल-प्रताप के लिए तीनों लोकों में विख्यात था। देवता उसके नाम से ही थर-थर काँपते थे। कुबेर से उसने पुष्पक विमान छीन लिया था। खर-दूषण के मारे जाने पर शूर्पणखा समुद्र पार कर रोती-चिल्लाती रावण के पास पहुँची और बोली—"भाई तेरे पौरुष को धिक्कार है। तेरे रहते मेरी यह दुर्गति हो रही है। अब तू कैसे मुँह दिखाएगा।" इतना कहकर शूर्पणखा पछाड़ खाकर गिर पड़ी।

> नाक कान बिनु भइ बिकरारा, जनु स्रव सैल गेरु के धारा।
> खर दूषन पहि गई बिलपाता, धिग धिग तव पौरुष बल भ्राता।।



रावण ने शूर्पणखा को उठाया और पूछा—'किसने तेरे नाक-कान काटे हैं ? किसके सिर पर काल मँडरा रहा है ? वता तो सही!' शूर्पणखा ने सारा हाल कह सुनाया। राम-लक्ष्मण के बल और रूप की प्रशंसा करते हुए उसने कहा कि उनके साथ एक परम सुंदरी स्त्री भी है। उसका नाम सीता है। मैंने समझा कि ऐसी सुंदरी स्त्री लंका के राजमहल के योग्य है। उसे मैं तुम्हारे लिए लाना चाहती थी। जब उन्हें मालूम हुआ कि मैं तुम्हारी बहिन हूँ, तो वे मुझसे हँसी करने लगे और लक्ष्मण ने मेरे नाक-कान काट लिए। मेरी नाक जो गई वह तो लौट नहीं सकती, पर उस सुंदरी को अवश्य ले आओ। बैरी की चुनौती स्वीकार करो।

खर-दूषण की मृत्यु के समाचार से रावण पहले तो कुछ घबराया, फिर उसने शूर्पणखा को समझा-बुझाकर सीता को ले आने का निश्चय कर लिया। उसने तुरंत अपना आकाशगामी रथ मँगाया और उसमें अकेले ही बैठकर समुद्र पार मारीच के पास पहुँचा। विश्वामित्र के आश्रम में श्रीराम के बाण से चोट खाकर मारीच समुद्र के किनारे तप करने लगा था। मारीच ने राक्षसराज का उचित सत्कार किया और इस तरह आने का कारण पूछा। रावण ने मारीच को पूरी कहानी बताकर अपना आशय बताया और कहा कि सीता-हरण में तुम मेरी सहायता करो। सोने का हिरन बनकर तुम राम-लक्ष्मण को आश्रम से दूर ले जाओ। तभी मैं सीता को हर लाऊँगा। स्त्री के वियोग में राम या तो अपने आप मर जाएगा या उसका बल क्षीण हो जाएगा। तब मैं उसे सहज ही जीत लूँगा।

रावण की बात सुनकर मारीच के प्राण सूख गए। उसने राम के बाण की घटना सुनाकर कहा कि अब तो जब कोई राम का नाम लेता है अथवा 'र' अक्षरवाला कोई शब्द 'रथ', 'राजा', 'रत्न' आदि बोलता

है तो 'र' सुनते ही मुझे कँपकँपी लग जाती है। मेरी बात मानें तो राम से बैर न करें।

मारीच की बात सुनकर रावण बड़ा क्रोधित हुआ और बोला, "मैं यहाँ तेरे उपदेश सुनने नहीं आया। आज्ञा देने आया हूँ। हो सकता है कि राम के बाण से तू बच जाए। लेकिन यदि मेरी बात नहीं मानी तो मैं तुझे अभी मार डालूँगा।" मारीच को विवश होकर रावण की बात माननी पड़ी। रथ में बैठकर दोनों पंचवटी पहुँचे और मारीच सोने का हिरन बनकर राम की कुटी के आस-पास घूमने लगा। रावण पेड़ों के झुरमुट में छिप गया।

सोने के विचित्र हिरन को देखकर सीता उस पर मुग्ध हो गईं। उन्होंने राम से उसको पकड़ने का आग्रह किया। राम को कुछ संदेह तो हुआ, परंतु सीता के कहने पर वे उसके पीछे चल पड़े।

लुकता-छिपता मारीच राम को बहुत दूर ले गया। उसे पकड़ने का राम ने बहुत प्रयत्न किया, परन्तु वह पकड़ में न आया। तब राम ने एक कठोर बाण उस पर छोड़ दिया। बाण लगते ही मारीच गिर पड़ा और अपने असली रूप में आ गया। राम की बोली में वह जोर से चिल्लाया—"हा सीता ! हा लक्ष्मण ! मैं मरा।"

राम की पुकार सुनते ही सीता लक्ष्मण से बोलीं—"भाई संकट में है। जल्दी जाओ।" लक्ष्मण ने कहा—"माता, आप चिन्ता न करें। आर्य राम का कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता। जो आवाज सुन पड़ी है, वह बनावटी मालूम पड़ती है। खर-दूषण के मारे जाने पर राक्षस बदला लेने पर उतारू हैं। वे हर तरह का छल कर सकते हैं।"

जब लक्ष्मण किसी तरह उन्हें अकेला छोड़ने को तैयार न हुए तो सीता अनेक प्रकार के दुर्वचन कहने लगीं। वे बोलीं, "तुम भी भरत के गुप्तचर मालूम पड़ते हो। हो सकता है मेरे ऊपर भी तुम्हारी कुदृष्टि

हो। अगर आर्यपुत्र को कुछ हो गया तो मैं गोदावरी नदी में डूब मरूँगी।''

होनी प्रबल होती है। इन कठोर वचनों से आहत होकर लक्ष्मण राम की खोज में चल पड़े। रावण ऐसे ही अवसर की तलाश में छिपा बैठा था। संन्यासी का भेष बनाकर वह सीताजी की कुटी पर वेद मंत्र बोलते हुए आ गया। सीताजी ने उचित अतिथि-सत्कार किया। तब रावण ने अपना नाम बताया और लंका चलने के लिए सीताजी से कहा। सीताजी ने उसे डाँटा और राम का डर दिखाया। रावण ने समय खोना उचित न समझा। उसने झपटकर सीताजी को उठा लिया और आकाश यान में बैठाकर लंका की ओर चल दिया।

सीताजी 'हा राम! हा लक्ष्मण!' चिल्लाती हुई रोती जाती थीं। प्रत्येक वृक्ष, पहाड़, पशु, पक्षी से वे निवेदन करतीं कि राम को बता दें कि लंका का राजा रावण तुम्हारी प्यारी रानी को पकड़ ले गया है।

गिद्धराज जटायु ने सीताजी का रोना सुना तो उसने अपने कोटर से निकलकर रावण को ललकारा और पूरी ताकत से वह रावण पर टूट पड़ा। उसने रावण का कवच काट डाला और उसे घायल कर दिया। जटायु ने रावण के धनुष-बाण काट डाले और उसका रथ भी तोड़-फोड़ डाला। तब रावण ने तलवार से जटायु के पंख काट डाले और सीता को लेकर लंका की ओर चल दिया।

रास्ते में सीता ने एक पहाड़ की चोटी पर कुछ बंदरों को बैठे देखा। रावण की आँख बचाकर उन्होने अपने कुछ आभूषण एक कपड़े में बाँधे और पोटली को पहाड़ की चोटी पर गिरा दिया।

लंका पहुँचकर रावण ने सीता को अपना सारा राजमहल दिखाया और कहा कि यह सब तुम्हारा ही है। तुम लंका की पटरानी बनने को तैयार हो तो मेरी सब रानियाँ तुम्हारी सेवा में रहेंगी। परंतु

सीता किसी तरह न मानीं। वे बराबर उसे डाँटती रहीं। तब रावण ने सीता को अशोक वाटिका में रखकर उन पर कड़ा पहरा लगा दिया और कहा—"मैं एक वर्ष का समय देता हूँ। यदि तू न मानी तो तेरा वध कर दिया जाएगा।" श्रीराम का ध्यान करते हुए सीता अपने दिन रो-रोकर काटने लगीं।

राम-विरह और सीता की खोज

मारीच को मारकर जब राम लौट रहे थे तो लक्ष्मण उनको सामने से आते हुए दिखाई दिए। लक्ष्मण को देखकर उनके मन में तरह-तरह



की शंकाएँ होने लगीं। मारीच का छल वे देख ही चुके थे। लक्ष्मण से वे रुष्ट होकर बोले—'मेरी आज्ञा का उल्लंघन करके तुमने ठीक नहीं किया।' लक्ष्मण ने सब बातें बताई। राम ने फिर भी कहा कि तुमको समझ से काम लेना था। मेरा मन कह रहा है कि सीता अब आश्रम में नहीं हैं।

दोनों भाई उदास मन कुटी में पहुँचे तो देखा बड़ा सन्नाटा है। वे 'सीता ! सीता !' कहकर पुकारते, पर कहीं से कोई उत्तर न आता। राम बोले—"देखो, सीता को कोई चुरा तो नहीं ले गया, या कहीं फूल चुनने निकल गई हैं।" दोनों भाइयों ने बाहर-भीतर सब जगह खोज की। उन्होंने हर पेड़ से पूछा, हर शिला से पूछा, पशु-पक्षियों से पूछा, पर सीता का पता किसी ने नहीं बताया। वे हाथ जोड़कर सूर्य से, पवन से, दसों दिशाओं से सीता का पता पूछते। शोक से व्याकुल होकर राम रोने लगे। पंचवटी के हिरन, गोदावरी नदी का सुहाना तट उन्हें दुखदायी लगने लगा। राम बहुत दुखी होकर लक्ष्मण से बोले—"मैं अब प्राण देने जा रहा हूँ। तुम अयोध्या लौट जाओ।"

लक्ष्मण ने समझा-बुझाकर राम को धैर्य बँधाया और सीता की खोज करने की सलाह दी। दोनों भाइयों ने एक-एक पहाड़ और एक-एक कंदरा खोज डाली। खोजते-खोजते वे दक्षिण की ओर बढ़ने लगे। वे कुछ ही दूर गए होंगे कि उन्हें सीता के पैरों के निशान दिखाई दिए। टूटा हुआ कवच और धनुष भी उन्होंने देखा। एक आकाशयान भी टूटा हुआ था। लगता था वहाँ कोई युद्ध हुआ है। तभी उन्हें खून से लथपथ जटायु दीख पड़ा। जटायु ने भी राम को देख लिया। उसके मुँह से रुधिर गिर रहा था, फिर भी वह हिम्मत करके बोला—"तुम जिस देवी की खोज कर रहे हो, उसे लंका का राजा रावण हर ले गया है। उसी ने मेरी यह दुर्गति कर दी है। तुम दक्षिण की ओर जाओ और सीता



तब सक्रोध निसिचर खिसिआना, काढ़ेसि परम कराल कृपाना।
काटेसि पंख परा खग धरनी, सुमिरि राम करि अद्‌भुत करनी।।

की खोज करो।'' इतना कहते-कहते उसकी जीभ लड़खड़ाने लगी और आँखें बंद हो गईं। राम ने धनुष-बाण फेंककर गिद्धराज को गोदी में उठा लिया और उसके लिए विलाप करने लगे। उन्होंने लक्ष्मण से कहा—''देखो, इस पक्षी ने भी हमारे लिए प्राण दे दिए। यह संत है। हमारे पिता का मित्र भी है। तुम वन से लकड़ियाँ बीन लाओ। मैं इसका दाह-संस्कार करूँगा।''

जटायु को जलांजलि देकर राम-लक्ष्मण एक घने जंगल में पहुँचे। सामने देखा तो कबंध नाम का एक बहुत बड़ा दानव उनका रास्ता रोके खड़ा था। उसका पेट बहुत बड़ा था, सिर था ही नहीं।



उसने एक-एक हाथ से दोनों भाइयों को पकड़ लिया और अट्टहास करते हुए बोला—"भगवान् ने आज घर बैठे भरपेट भोजन दिया है। मैं कई दिन से भूखा था।" राम-लक्ष्मण ने अपनी-अपनी तलवारें निकालीं और उसकी भुजाएँ काट डालीं। कबंध व्याकुल होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। राम के स्पर्श से उसकी बुद्धि शुद्ध हो गई। उसने राम-लक्ष्मण के बारे में जानना चाहा। राम ने उसे अपने बारे में सब बताया। कबंध बोला—"मेरा दाह-संस्कार कर दें तो बड़ी कृपा होगी।" उसने यह भी कहा कि सीता के बारे में मुझे कुछ मालूम तो नहीं है, परंतु मैं एक उपाय बताता हूँ। यहाँ से दक्षिण-पश्चिम की ओर ऋष्यमूक नाम का एक पर्वत है। वहाँ मंत्रियों सहित सुग्रीव नाम का एक बानर रहता है। उससे मिलिए। उसकी मदद से सीता का पता लग जाएगा। पहले आपको पंपा नाम का सरोवर मिलेगा। सरोवर के किनारे मतंग ऋषि का आश्रम है। आश्रम में ऋषि की शिष्या शबरी

होगी। उससे भी मिलें। इतना कहकर कबंध मर गया। राम-लक्ष्मण ने उसका दाह-संस्कार कर दिया। राम के स्पर्श से वह शाप मुक्त हो गया। एक ऋषि के शाप से वह दानव हो गया था और इंद्र के वज्र की चोट से उसका सिर पेट में घुस गया था। तभी से उसका नाम कबंध पड़ गया था। चलते-चलते राम शबरी के आश्रम में पहुँचे। शबरी ने दौड़कर राम के पैर छुए, चरण धोए, आसन दिया और मीठे-मीठे फल-मूल खाने को दिए। वह बोली–"ऋषि ने मुझे बताया था कि चित्रकूट से चलकर राम किसी न किसी दिन अवश्य इधर आएँगे।" श्रीराम ने बड़े प्रेम से शबरी के दिए हुए फल खाए।

श्रीराम ने शबरी से सीताजी का पता पूछा। शबरी ने भी बताया कि सुग्रीव से मित्रता कीजिए। सीता की खोज में वह अवश्य सहायक होगा। तब शबरी ने श्रीराम को मतंग ऋषि का आश्रम और मतंग वन दिखाया और ऋषि के चमत्कार की बहुत सी कथाएँ सुनाईं। फिर राम की अनुमति लेकर उसने शरीर-त्याग कर दिया। शबरी से मिलकर राम के मन को बड़ी शांति मिली और व्याकुलता जाती रही।

प्रश्न

1. श्रीराम ने राक्षस-वध की प्रतिज्ञा क्यों की ?
2. अगस्त्य ऋषि कौन थे ? उन्होंने राम-लक्ष्मण को क्या परामर्श दिया और उनके कार्य में क्या सहायता की ?
3. खर-दूषण और राम के युद्ध का वर्णन करो।
4. रावण ने किस प्रकार सीता का हरण किया ?
5. राम द्वारा सीता की खोज का संक्षेप में वर्णन करो।

बोध और विचार

ऋषि-मुनियों और राक्षसों के प्रति राम-लक्ष्मण के व्यवहार से हमें क्या प्रेरणा मिलती है ?

4. किष्किधा-कांड

राम और सुग्रीव की मित्रता

वसंत ऋतु होने से वन में तरह-तरह के फूल खिल रहे थे। उन पर भौंरे मँडरा रहे थे। आम पर कोयल कूकती थी, वन में मोर नाचते थे और सरोवरों में कमल खिले थे। सीता के न रहने पर राम को वन की यह शोभा बड़ा दुःख दे रही थी। अब वे ऋष्यमूक पर्वत की ओर बढ़े।

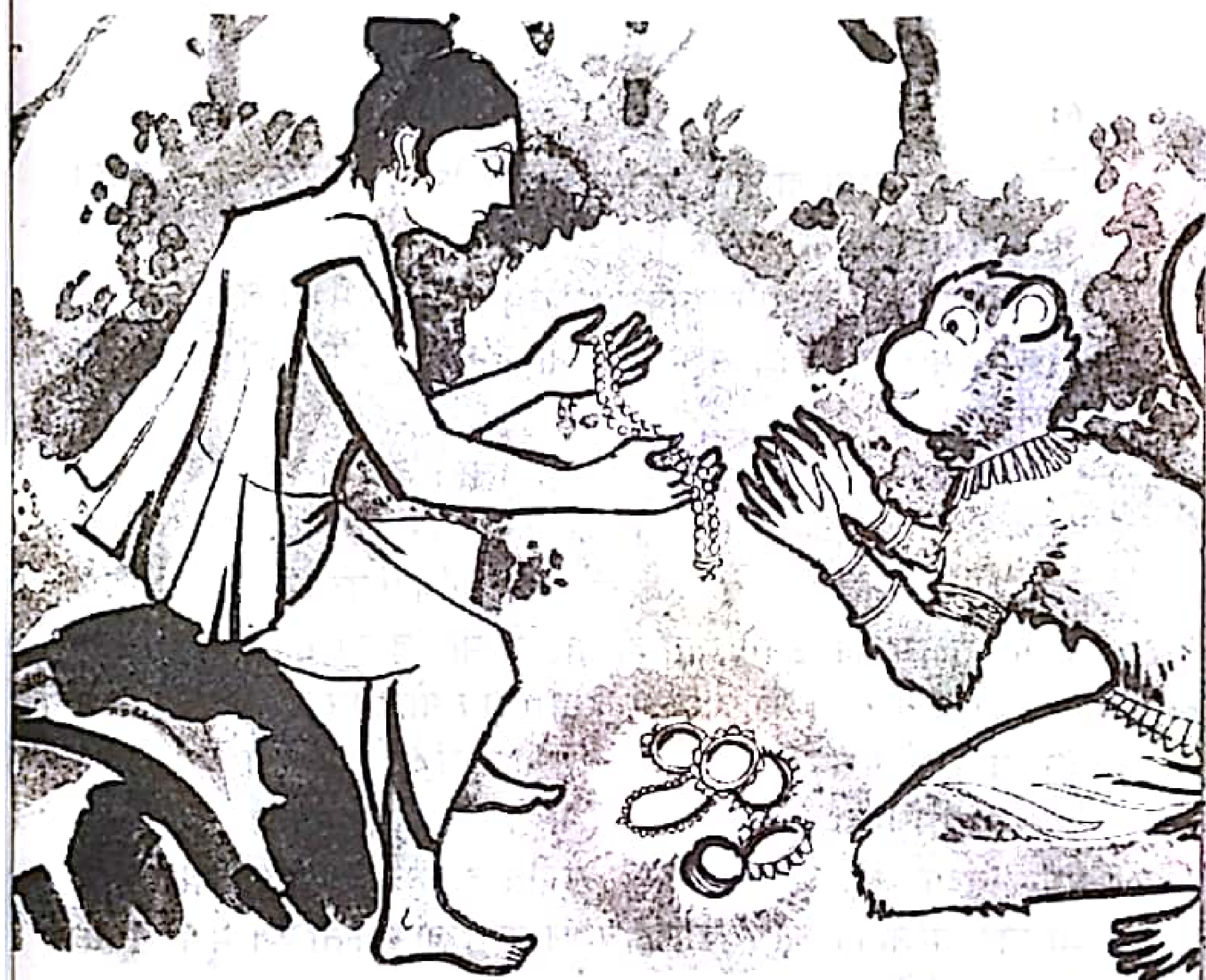
ऋष्यमूक पर्वत पर से सुग्रीव ने देखा कि दो धनुर्धर वीर पर्वत की ओर चलते आ रहे हैं। उसको शंका हुई कि कहीं बालि ही ने तो उन्हें नहीं भेजा। बालि उसका बड़ा भाई था और उसे मार डालना चाहता था। बालि के भय से ही सुग्रीव इस पर्वत पर रहता था। मतंग ऋषि के शाप के कारण वह ऋष्यमूक पर नहीं आता था। सुग्रीव घबराया, फिर कुछ सोच-समझकर उसने हनुमान से पता लगाने के लिए कहा। हनुमान की बुद्धि और उनके बल पर सुग्रीव को बड़ा भरोसा था।

भेष बदलकर हनुमान राम-लक्ष्मण के पास गए। उन्होंने शिष्टता के साथ प्रणाम किया और संस्कृत भाषा में बातचीत की। रामचन्द्रजी से उन्होंने पूछा, "आप इस वन में क्यों घूम रहे हैं ? नर वेश में कोई देवता हैं या कहीं के राजकुमार हैं ? अगर राजकुमार हैं, तो मुनियों का-सा भेष क्यों बना रखा है ? मैं पवन का पुत्र हनुमान हूँ और पंपापुर के राजा बालि के छोटे भाई सुग्रीव का सेवक हूँ। सुग्रीव बड़े धर्मात्मा और बुद्धिमान हैं, उन्होंने मुझे यहाँ भेजा है। आपसे मिलकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता होगी।"

राम ने हनुमान की बातें सुनकर समझ लिया कि वे बड़े अच्छे पंडित हैं। इनके मुंह से एक भी अशुद्ध या निरर्थक शब्द नहीं निकला। बोलते समय चेहरे पर कोई विकार नहीं दिखाई पड़ा। जिनके ये मंत्री हैं वे भी ऐसे ही होंगे। लक्ष्मण बोले–''हे हनुमान ! ये कौशल देश के राजा दशरथ के सबसे बड़े पुत्र राम हैं। मैं इनका छोटा भाई लक्ष्मण हूँ। पिता की आज्ञा से हम चौदह वर्ष को वन में रहने के लिए निकले हैं। साथ में भाई राम की धर्म पत्नी राजा जनक की पुत्री सीताजी भी थीं। पंचवटी के आश्रम से कोई दुष्ट राक्षस उन्हें उठा ले गया है। उन्हीं को हम खोज रहे हैं। कबंध ने सुग्रीव की प्रशंसा की थी। उनकी सहायता मिल जाए, तो काम बने।''

हनुमान ने समझ लिया कि राम और सुग्रीव दोनों की दशा समान है। दोनों को एक दूसरे की मदद चाहिए, इसलिए दोनों में मित्रता हो सकती है। यह सोचकर राम-लक्ष्मण को उन्होंने अपने कंधों पर बैठाया और उछलते-कूदते और छलाँग भरते वे ऋष्यमूक पर्वत के शिखर पर जा पहुँचे। हनुमान ने सुग्रीव को राम का सारा हाल बताया और राम को सुग्रीव का। फिर आग को साक्षी करके दोनों की मित्रता कराई। राम ने कहा कि हम अग्निदेव के सामने प्रतिज्ञा करते हैं कि आज से तुम हमारे मित्र हुए। तुम्हारे सुख-दुख को हम अपना सुख-दुख मानेंगे। उपकार करना मित्र का लक्षण है और अपकार करना शत्रु का। सुग्रीव ने भी ऐसी ही शपथ ली।

राम और सुग्रीव में बातें होने लगीं। हनुमान ने चन्दन की एक फूली हुई टहनी लक्ष्मण को दी। सुग्रीव ने सीता की खोज कराने का आश्वासन दिया और फिर सीताजी के गहनों की पोटली लाकर दिखाई। राम ने उन्हें तुरंत पहचान लिया। लक्ष्मण से भी उन्होंने पूछा। लक्ष्मण ने उत्तर दिया कि कानों के कुंडल और बाजूबंद के बारे



तब हनुमंत उभय दिसि की सब कथा सुनाइ।
पावक साखी देइ करि जोरी प्रीति दृढ़ाइ।।

में तो मैं कुछ नहीं कह सकता, नूपुरों को अवश्य पहचानता हूँ कि वे सीता माता के ही हैं। नित्य सवेरे चरण छूते समय उन्हें मैं देखता था।

आभूषणों को देखकर राम शोक सागर में डूब गए। तब सुग्रीव ने उनको धीरज बँधाया और कहा कि मैं हर प्रकार से आपकी सहायता करूँगा। सीताजी अवश्य मिलेंगी। विपत्ति में सहायता देने वाला सच्चा मित्र होता है। मित्रता करना सहज है, पर उसे निभाना कठिन है। तब राम ने सुग्रीव से अपना हाल बताने के लिए कहा। सुग्रीव ने कहा, 'किष्किंधा का राजा महाबलवान बालि मेरा बड़ा भाई है। उसने मुझे राज्य से निकाल दिया है। मेरी स्त्री छीन ली है। मेरा वध करने की वह बराबर चेष्टा कर रहा है। उससे बचने के लिए मैंने पृथ्वी का

कोना-कोना छान डाला। हनुमान, नल और नील मेरे सच्चे साथी हैं। घोर विपत्ति में भी इन्होंने मुझे नहीं छोड़ा।'

सुग्रीव की कहानी सुनकर श्रीराम बोले कि मैं बालि को एक ही बाण से मार डालूँगा। तुमको अपनी स्त्री भी मिलेगी और राज्य भी मिलेगा।

फिर भी सुग्रीव को भरोसा नहीं हुआ। वह बोला "हे रघुवीर! बालि महाबलशाली है। पर्वतों को उखाड़कर वह गेंद की तरह फेंक देता है, बड़े-बड़े वृक्षों को एक ही धक्के से गिरा देता है। महाभीषण दुंदुभी राक्षस को उसने बात ही बात में मार डाला था। सामने खड़े सात शाल के वृक्षों को बालि एक साथ झकझोर कर पत्ता-पत्ता गिरा देता था। जो पुरुष एक ही बाण से सभी वृक्षों को काट देगा, वही बालि वध में समर्थ हो सकता है।" राम ने एक दिव्य बाण द्वारा सातों शाल-वृक्षों को काट गिराया। सुग्रीव चकित हो गया और हाथ जोड़कर बोला कि आपके हाथों बालि मारा जा सकता है। मुझे आपके बल पर भरोसा हो गया।

राम ने कहा, "अब देर मत करो। चल कर बालि को युद्ध के लिए ललकारो। मैं पेड़ों की आड़ में छिपकर तुम्हारा युद्ध देखूँगा और अवसर पाते ही बालि पर बाण छोड़ दूँगा।"

बालि-वध

युद्ध के लिए तैयार होकर सुग्रीव किष्किंधा नगरी पहुँचा और बालि को ललकारने लगा। सुग्रीव को देखकर बालि क्रोध से उसकी ओर झपटा। भयंकर मल्ल युद्ध होने लगा। बालि की मार खाकर सुग्रीव किसी तरह प्राण लेकर भागा। बालि ने कुछ दूर तक पीछा भी किया। परंतु जब वह ऋष्यमूक पर्वत के निकट पहुँच गया तब बालि लौट आया। राम धनुष पर बाण चढ़ाए देखते ही रह गए।

थोड़ी देर बाद राम भी सुग्रीव के पास पहुँच गए। राम को देखकर सुग्रीव को क्रोध आया। वह बोला–"मुझको आपने बड़ा धोखा दिया। यदि बालि को नहीं मारना था, तो मुझे भेजा ही क्यों। देखते नहीं मेरी उसने नस-नस तोड़ दी है ! सारे शरीर में भयंकर पीड़ा हो रही है। यदि भाग न आता तो वह मुझे मार ही डालता।" राम ने अपनी कठिनाई बताई, "तुम दोनों भाई शक्ल सूरत में इतने मिलते-जुलते हो कि मैं बालि को निश्चयपूर्वक नहीं पहचान सका। धोखे में यदि बाण तुम्हें लग जाता तो बड़ा अनर्थ होता। इतना कहकर राम ने सुग्रीव के शरीर पर हाथ फेरा। उसकी सब पीड़ा जाती रही। उसकी देह वज्र की तरह कठोर हो गई।

राम ने सुग्रीव के गले में नागपुष्पी की लता, माला की तरह पहना दी और सुग्रीव से कहा कि अब फिर युद्ध के लिए जाओ। सुग्रीव बहुत डरा हुआ था। परंतु राम के अनुरोध करने पर वह चला गया और नगर के द्वार पर पहुँच कर सिंह की भाँति गरजने लगा। बालि अन्तःपुर में था। सुग्रीव की आवाज़ सुनकर वह पैर पटकता हुआ दौड़ा। बालि की स्त्री तारा बड़ी बुद्धिमती थी। उसने सोचा कि



अभी-अभी सुग्रीव हारकर भागा है। इतनी जल्दी फिर कैसे ललकार रहा है। जरूर कोई न कोई बलवान योद्धा उसके पीछे है। इसलिए उसने बालि को जाने से रोका और कहा कि मैंने अंगद से सुना हैं कि अयोध्या के दो वीर राजकुमार इधर आए हैं। कौन जाने सुग्रीव से उनकी मित्रता हो गई हो। आप इस समय न जाएँ। मेरा मन कुछ ऐसा ही हो रहा है। गुप्तचरों से सही बात पता लगा लें। अगर मेरा अनुमान सही हो तो आप भी राम से मिल लें। वे वीर और धर्मात्मा हैं। फिर सुग्रीव भी आपका छोटा भाई ही तो है। उसे युवराज बनाकर अपना लें।

बालि ने तारा को डाँट दिया और कहा, ''सुग्रीव भाई नहीं बैरी है। बैरी की ललकार मैं नहीं सह सकता। फिर तूने ही कहा है कि राम धर्मात्मा हैं। वे अकारण मुझे क्यों मारेंगे ! इतना वचन मैं तुझे भी देता हूँ कि मैं सुग्रीव को जान से नहीं मारूँगा। बस उसका अहंकार चूर करके छोड़ दूँगा।''

बालि ने दूसरी बार युद्ध में सुग्रीव को एक घूँसा मारा। उसके मुँह से रक्त निकलने लगा। वह सँभलकर फिर युद्ध करने लगा। चपेटों की आवाज तड़ातड़ होने लगी। धीरे-धीरे सुग्रीव का बल क्षीण होने लगा। सुग्रीव को व्याकुल देखकर राम ने एक कठोर बाण बालि को लक्ष्य बनाकर छोड़ दिया। बालि का सीना फट गया और वह पृथ्वी पर गिर पड़ा।

बालि के गिरते ही सुग्रीव के सभी साथी प्रकट हो गए। बालि ने देखा कि सामने धनुष चढ़ाए राम खड़े हैं। बालि ने उनसे प्रश्न किए, ''मैंने आपका क्या बिगाड़ा था ? न तो मैंने आपका अपमान किया और न आपके राज्य पर चढ़ाई ही की। आपने यह अधर्म क्यों किया ? मुझे तो आप कपट वेशधारी छलिया लगते हैं। संसार को आप क्या जवाब

देंगे ? लड़ना ही था तो सामने आकर लड़ते। रही सुग्रीव से मित्रता की बात, यदि मुझसे कहते तो मैं एक ही दिन में रावण और मंदोदरी समेत सीताजी को लाकर आपको दे देता।'' बालि पीड़ा से बेचैन था। अधिक न बोल सका।

राम को बालि की बातों पर रोष-सा आया। वे बोले,'बालि जिस धर्म की तुम दुहाई देते हो, मेरा काम उसी के अनुसार हुआ है। तुमने अपने छोटे भाई की स्त्री को उसके जीते-जी अपने घर में रख लिया है। उसकी पत्नी रुमा तुम्हारे लिए बेटी के समान है। तुम्हें मारकर मैंने धर्म की रक्षा की है और मित्र की सहायता की है। तुम्हारे काम पशुओं जैसे थे। पशु को आड़ में से मारने में कोई दोष नहीं।'

बालि ने राम से हाथ जोड़कर क्षमा माँगी और कहा 'मुझे पर-स्त्री-हरण का दंड मिल गया। अपने लिए मुझे कोई चिन्ता नहीं। मेरी स्त्री तारा अनाथ हो गई है और मेरा इकलौता बेटा अंगद भी अनाथ हो गया। इन पर कृपा कीजिए।' राम ने सुग्रीव के सामने ही बालि को आश्वासन दिया। तभी तारा भी रोती-रोती आई और पति से लिपटकर विलाप करनें लगी। बालि ने एक बार आँख खोली और सुग्रीव को इशारे से अपने पास बुलाया और धीरे से कहा–''सुग्रीव, मैं सदा के लिए जा रहा हूँ। पिछली बातों को भूल जाओ। सब भाग्य का खेल था। किष्किंधा का राज मैं तुम्हें खुशी से देता हूँ। अंगद के अब तुम्हीं पिता हो। जानते हो वह कितने लाड़-प्यार से पला है। तारा के सुख-सम्मान का ध्यान रखना। राम के काम में किसी प्रकार की ढील न करना।'' इतना कहकर बालि ने अपने गले की माला उतारकर सुग्रीव के गले में डाल दी। अंगद को बुलाकर उससे कहा, 'तुम किसी से न अधिक बैर करना, न अधिक प्रेम; क्योंकि दोनों ही महान दोष हैं। बीच का रास्ता अच्छा होता है।' इतना कहते-कहते बालि की आँखें बंद हो गईं।

भाई के बल पौरुष की याद कर सुग्रीव भी रोने लगा। राम ने तारा, सुग्रीव और अंगद सबको समझा-बुझाकर धीरज बँधाया। सुग्रीव ने विधिपूर्वक बालि की अन्त्येष्टि की। सुग्रीव सहित सब वानर राम के पास लौटकर आ गए। राम ने सुग्रीव से कहा—"वानरराज! अब नगर में जाकर अपना राजतिलक कराओ और अंगद को अपना युवराज बनाओ। अब वर्षा ऋतु आ गई है। मैं प्रस्रवण पहाड़ पर रहूँगा। वर्षा समाप्त होते ही आ जाओ और सीता की खोज में लग जाओ।" सुग्रीव बोला—"जैसी आपकी आज्ञा होगी वैसा निश्चय ही करूँगा। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि वर्षा समाप्त होते ही वानर सीता की खोज में निकल जाएँगे।"

वानरों द्वारा सीता की खोज

सबसे विदा लेकर सुग्रीव किष्किंधा नगर में चले गए। वर्षा काल बिताने के लिए राम प्रस्रवण पर्वत की एक सुंदर गुफा में रहने लगे। वर्षा ऋतु राम को बड़ी दुखदायी हो रही थी। कभी वे लक्ष्मण से कहते—"सुग्रीव को तो स्त्री-सुख के साथ-साथ राज्य भी मिल गया। वह कितना सुखी है। मुझे पहले राज्य लक्ष्मी ने छोड़ दिया, फिर वन में आकर स्त्री ने। कहाँ जाऊँ! क्या करूँ!"

उधर सुग्रीव ने बालि की स्त्री तारा से विवाह कर लिया। भोग-विलास और मदिरा पान में वह डूब गया और राम को दिया हुआ अपना वचन बिल्कुल भूल गया। जब वर्षा समाप्त हो गई तो हनुमान ने सुग्रीव को अपने कर्तव्य की याद दिलाई। सेनापति नील को बुलाकर सुग्रीव ने आज्ञा दी कि पंद्रह दिन के भीतर सब वानर राजधानी में आ जाएँ। नील ने सभी दिशाओं में दूत भेजे। सुग्रीव फिर भोग-विलास में रम गया।

इधर शरद ऋतु आने पर सुग्रीव राम के पास नहीं आया, तो उन्हें बड़ा क्रोध हुआ। उन्होंने लक्ष्मण से कहा कि राजमद में डूबकर

मालूम होता है सुग्रीव मेरा काम भूल गया है। किष्किन्धा जाकर उससे साफ कह दो कि यमलोक का दरवाजा बंद नहीं हुआ। जिस रास्ते बालि गया है उसी से उसको भी भेज दूँगा। इतना सुनते ही लक्ष्मण आग बबूला हो गए और धनुष बाण लेकर चल दिए। लक्ष्मण को बड़े क्रोध में देखकर राम ने कहा –'डरा धमकाकर और समझा-बुझाकर काम निकालना है। आखिर सुग्रीव हमारा मित्र ही तो है और उससे सहायता भी लेनी है।'

किष्किन्धा पहुँचकर लक्ष्मण ने धनुष की टंकार की तो सुग्रीव भयभीत हो गया। लक्ष्मण के सामने आने का उसको साहस नहीं हुआ। तारा ने बुद्धिमानी से उनका क्रोध शांत किया। वह लक्ष्मण को अन्तःपुर में ले गई और उनका उचित आदरसत्कार किया। सुग्रीव ने हनुमान को बुलाकर कहा–"फिर दूत भेजो। सब वानरों को बुलवाओ। जो दस दिन के भीतर नहीं आ जाएगा। उसे कठोर दंड मिलेगा।" इसके बाद लक्ष्मण के साथ सोने की पालकी में बैठकर वह राम से मिलने गया। राम के चरणों पर गिरकर उसने क्षमा माँगी। राम ने बड़े स्नेह से उसे गले लगा लिया।

राम और सुग्रीव में बातें हो ही रही थीं कि वानर-भालुओं की टोलियाँ आ पहुँची। नल, नील, अंगद और हनुमान के साथ लाखों वानर प्रस्रवण पर्वत पर आ गए। जामवंत के पीछे-पीछे भालुओं की बड़ी भारी भीड़ थी। वानर-भालुओं को देखकर राम बड़े प्रसन्न हुए। राम ने सुग्रीव से कहा, "भाई ! पहले तो यह पता लगाना है कि सीता जीवित है अथवा नहीं। यदि जीवित है तो किस स्थिति में है?"

सुग्रीव ने वानर-दल को चार भागों में बाँटा। प्रत्येक दल का एक नायक बना दिया। सुग्रीव ने उन्हें नगरों, द्वीपों और वनों का पूरा विवरण भी बता दिया। उसने हनुमान, नल, नील आदि चुने हुए

वानरों को अंगद के नेतृत्व में दक्षिण की ओर भेजा। हनुमान को पास बुलाकर राम ने अपने नाम की अँगूठी दी और कहा कि मेरी यह निशानी देखकर सीता समझ जाएगी कि तुमको मैंने भेजा है। उसका हाल लेकर मेरा दुख भी उसे सुनाना।

सुग्रीव ने सबको कहा, "वीरो ! जैसे भी हो सके सीताजी का पता लगाओ। इस काम के लिए एक महीने का समय दिया जा रहा है। बिना समाचार लिए जो एक महीने बाद लौटेगा, उसे मृत्यु दंड मिलेगा।"

'राजा सुग्रीव की जय ! महाराजा रामचन्द्रजी की जय !' नारे लगाते हुए वानर-वीर अपनी-अपनी दिशाओं में चल पड़े।

पूर्व, पश्चिम और उत्तर की ओर गए दल निराश होकर महीने के भीतर लौट आए। दक्षिण का दल वनों, पर्वतों और कंदराओं को खोजता हुआ समुद्र तक जा पहुँचा। अब कहाँ जाएँ ! सामने अथाह सागर गरज रहा था। किष्किंधा से चले कई महीने हो गए थे। यदि यों ही लौटे तो सुग्रीव के हाथों मरना निश्चित है। अब न आगे जा सकते हैं और न पीछे।

तभी उन्होंने पर्वत की चोटी पर एक बड़ा भयंकर गिद्ध देखा। वह जटायु का बड़ा भाई संपाति था। वानर उसे देखकर डर गए और समझे कि निश्चित ही वह हमें खा जाएगा। हनुमान ने बुद्धि से काम लिया। वे बोले, "आपसे अच्छा तो जटायु ही था जो राम का कुछ काम करके तो मरा।" जटायु का नाम सुनकर संपाति बोला—"वानरो! घबराओ मत। अपना परिचय दो और कृपा करके यह बताओ कि जटायु कब और कैसे मरा, वह मेरा छोटा भाई था।"

अंगद ने सारा हाल कह सुनाया। उसे सुनकर संपाति बोला, "मैं अब बूढ़ा हो गया हूँ। नहीं तो तुम्हारी सहायता करके रावण से अपने

भाई की मृत्यु का बदला लेता। कुछ महीने पहले मैंने देखा था कि रावण एक स्त्री को लिए जा रहा है। वह हा राम! हा लक्ष्मण! कहकर रोती जा रही थी।

वह सीता ही होगी। समुद्र के किनारे तुम दक्षिण तक चलते जाओ। वहाँ से सौ योजन लंबे समुद्र को यदि कोई पार कर सकेगा तो वह सीता से मिल सकता है।" वानर दक्षिणी तट तक जा पहुँचे। अब लंका पहुँचने की योजना पर विचार होने लगा। कोई भी वानर आगे नहीं आ रहा था। अंगद बड़े उदास हो गए। तब जामवंत ने हनुमान से कहा—"वीर! तुम तो पवन पुत्र हो। कैसे चुप बैठे हो? उठो! सबकी आँखें तुम्हारी ओर लगी हैं।"

इतना सुनना था कि हनुमान, सिंह की तरह अँगड़ाई लेकर उठे। सोने के पहाड़ की तरह उनका शरीर हो गया। उन्होंने हाथ जोड़कर जाने की आज्ञा माँगी। सबने उनको शुभकामनाएँ देकर विदा किया और कहा कि हनुमान! हमारा जीवन भी तुम्हारे ही हाथ में है।

एक छलाँग में हनुमान महेन्द्र पर्वत पर जा खड़े हुए।

प्रश्न

1. राम और सुग्रीव की मित्रता किस प्रकार हुई? इस प्रसंग में सच्चे मित्र के क्या लक्षण बताए गए हैं?
2. राम द्वारा वालि के मारे जाने को बालि ने अधर्म का काम बताया है और राम ने उसे ठीक बताया है। तुम अपनी राय दो और पुष्टि के कारण बताओ।
3. वानरों द्वारा सीता की खोज का वर्णन करो।
4. संपाति कौन था? उसने वानरों की क्या मदद की?

—•—

5. सुदर

लंका में हनुमान का प्रवेश

महेन्द्र पर्वत पर खड़े होकर हनुमान ने पहले सामने की ओर देखा। अनंत सागर लहरा रहा था, ऊपर देखा तो अनंत आकाश था। पवन देवता का स्मरण करके उन्होंने अपनी लंबी भुजाएँ आगे फैलाकर छलाँग ली और पवन की गति से लंका की ओर उड़ चले। हवा को चीरते हुए वे गरजते चले जाते थे। मैनाक पर्वत ने उनको विश्राम देना चाहा, परंतु वे रुके नहीं।

कुछ ही दूर गए होंगे कि नागों की माता सुरसा उनके बुद्धि बल की परीक्षा लेने मुँह फाड़कर उनकी ओर दौड़ी। हनुमान ने बहुत विनय की, पर वह न मानी और अपना मुँह बढ़ाने लगी। हनुमान भी अपना शरीर बढ़ाते गए। जब उसका मुँह बहुत चौड़ा हो गया, तब हनुमान अपना शरीर छोटा करके उसके मुँह में घुसकर तुरंत निकल आए और बोले—"माता! अब तो मैं तुम्हारे मुँह में घुसकर बाहर आ गया हूँ। अब जाने की अनुमति दें।" सुरसा की परीक्षा में हनुमान खरे उतरे। उसने हनुमान को आशीर्वाद देकर कहा कि तुम राम का काम अवश्य कर लाओगे।

कुछ और आगे चलने पर उन्हें सिंहिका नाम की राक्षसी का सामना करना पड़ा। उसने जल में हनुमान की परछाई पकड़ ली। इससे उनकी गति रुक गई और वे खिंचकर सिंहिका के पास जा पहुँचे। हनुमान ने अपने नाखुनों से उसका पेट फाड़ डाला। वे फिर उड़े और समुद्र पारकर लंका जा पहुँचे।

छोटा रूप बनाकर हनुमान एक पर्वत की चोटी पर चढ़ गए। वहाँ से सारी लंका दिखाई देती थी। उन्होंने देखा कि लंका के चारों ओर बड़ा मजबूत परकोटा है। परकोटे के चारों ओर चौड़ी खाई है और तरह-तरह के हथियार लिए सैनिक पहरा दे रहे हैं। उन्होंने यह भी देखा कि दुर्ग पर सैकड़ों शतघ्नियाँ रखी हैं। सोने की लंका जगमगा रही है। नगर की शोभा और सुरक्षा देखकर हनुमान चकित हो गए। उन्होंने रात अँधेरे में लंका में प्रवेश करना ठीक समझा।

विड़ाल का-सा छोटा रूप बनाकर हनुमान लुकते-छिपते लंका में घुस गए। उन्होंने देखा कि लंका में एक से एक उत्तम भवन हैं। चाँदनी रात में वे एक अटारी से दूसरी अटारी पर आसानी से कूदने लगे। सीता उनको कहीं दिखाई नहीं दीं। तब वे रावण के महल में घुस गए। उन्होंने देखा कि रावण एक सजे हुए पलंग पर सो रहा है। आस-पास अनेक सुंदरियाँ सो रही हैं। इधर-उधर मदिरा की प्यालियाँ पड़ी हैं। हनुमान ने बड़ी सावधानी से रावण का अन्तःपुर

सिंधु तीर एक भूधर सुन्दर, कौतुक कूदि चढ़ेउ ता ऊपर।



छान डाला, परंतु सीता उनको कहीं न मिली। मंदोदरी को देखकर उनको सीता का भ्रम भी हुआ, परंतु उन्होंने शीघ्र ही समझ लिया कि रावण के महल में सीता इस प्रकार निश्चित होकर नहीं सो सकतीं। उन्होंने एक-एक गली, एक-एक घर देख लिया, पर सीता कहीं न मिलीं। रावण के पुष्पक विमान को देखकर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। वह बड़ा अद्भुत था। उसके पंखों में मणियाँ जड़ी हुई थीं।

अन्तःपुर से लगी हुई रावण की अशोक वाटिका थी। एक परकोटे के ऊपर से हनुमान ने उसे देख लिया और पहरेदारों की आँख बचाकर उसमें घुस गए। अशोक वाटिका में तरह-तरह के सुंदर वृक्ष थे और बीच में एक ऊँचा भवन था। अशोक के पेड़ पर चढ़ कर हनुमान उसे देखने लगे। उन्हें तरह-तरह की मुँहवाली अनेक राक्षसियाँ दिखाई दीं। फिर उन्होंने देखा कि उनके बीच में एक उदास स्त्री बैठी आँसू बहा रही है। उनको लगा कि हो न हो यही सीता जी हैं। उन्होंने मन ही मन उन्हें प्रणाम किया और वे सोचने लगे किस प्रकार माता से बात हो। तरह-तरह की बातें सोचते वे पत्तों में छिपे बैठे रहे।

अब रात का अंतिम पहर आ गया। नगरी में वेद पाठ होने लगे। रावण भी जगा और अपनी रानियों और दासियों को लेकर अशोक वाटिका में आ पहुँचा। हनुमान डाली से चिपक गए जिससे किसी की निगाह उन पर न पड़े। रावण को देखकर सीता थर-थर काँपने लगीं। रावण ने सीता को अनेक प्रकार के भय व लोभ दिखाए। परंतु सीता ने रावण का तिरस्कार ही किया। सीता ने कहा ''यदि, तुम मुझे स्वामी के पास पहुँचाकर क्षमा नहीं माँगोगे तो वे तुम्हारा सर्वनाश कर डालेंगे। सोने की लंका मिट्टी में मिल जाएगी।'' क्रोध से आँखें लालकर रावण बोला– ''मैंने सोचने के लिए एक साल का समय दिया था। साल पूरा होने में दो महीने बचे हैं। इस बीच यदि तुम मेरी बात नहीं मान लेती

तो मैं अपनी चंद्रहास तलवार से तुम्हारा गला काटकर फेंक दूँगा।" इतना कहकर रावण चला गया।

रावण के चले जाने पर त्रिजटा नाम की एक बूढ़ी राक्षसी ने दूसरी राक्षसियों से कहा, "पिछली रात मैंने एक सपना देखा है। सारी लंका समुद्र में डूब गई। विभीषण को छोड़कर सब दक्षिण दिशा को चले गए हैं। यह सपना अच्छा नहीं है। मेरी राय में सीताजी की सेवा करने में ही भलाई है।"

पेड़ पर बैठे-बैठे हनुमान सब कुछ देख-सुन रहे थे। सीता का दुःख देखकर वे दुःखी भी थे। उनको यह भी चिन्ता थी कि यदि सीता के सामने आकर संस्कृत में बोल उठें तो सीता उन्हें कहीं मायावी रावण ही न समझ ले। यह विचार कर उन्होंने पेड़ पर से ही राम वृत्तांत सुनाना शुरू किया। उन्होंने राजा दशरथ का वैभव, राम-जन्म, राम-विवाह, राम-वनवास, सीता-हरण, सुग्रीव-मैत्री आदि का सब वृत्तांत संक्षेप में कह सुनाया। सीताजी आत्महत्या के विचार से उसी पेड़ के नीचे आ गई थीं, जिस पर हनुमान बैठे थे। उन्होंने ऊपर की ओर देखा। हनुमान को देखकर पहले तो वे घबराईं, पर उनकी बातों से और उनके व्यवहार से भरोसा हो चला कि वे राम के ही दूत हैं और पता लेने के लिए यहाँ आए हैं। अब हनुमान ने देखा कि सीता के मन में बार-बार संदेह उठ रहे हैं, तो उन्होंने पर्वत पर फेंके हुए आभूषणों की चर्चा की और अंत में राम की दी हुई मुद्रिका दी। अब सीता को पूरा भरोसा हो गया।

हनुमान ने सीता का दुःख सुना और राम का विरह सुनाया। फिर उनको ढाढ़स बँधाते हुए कहा– "समाचार पाते ही श्रीराम सेना लेकर आएँगे और रावण का वध करके आपको ले जाएँगे।"

सीताजी ने अपना चूड़ामणि उतारकर हनुमान को दिया और



गम दूत मैं मातु जानकी, सत्य सपथ करुनानिधान की।
यह मुद्रिका मातु मैं आनी, दीन्हि राम तुम्ह कहं सहिदानी।।

कहा, ''जब तुम इसे स्वामी को दिखःओगे तो वे समझ जाएंगे कि तुम मुझसे मिल चुके हो। वीरवर लक्ष्मण से मेरा शुभाशीर्वाद कहना। अब लौट जाओ तुम्हारी यात्रा मंगलमय हो।''

लंका-दहन

सीताजी से विदा लेकर हनुमानजी चल पड़े, फिर रुककर सोचने लगे कि अब आ गए हैं तो कुछ अपना पराक्रम भी दिखाएँ और शत्रु का बल भी जानें। आगे काम आएगा। वे अशोक वाटिका के पेड़ों पर टूट पड़े। उन्होंने फल खाए, वृक्ष तोड़े और चित्रघर तोड़-फोड़ डाले। पहरेदारों को उन्होंने मारकर भगा दिया।

राक्षसियाँ और पहरेदार रावण के दरबार में पहुँचे। उन्होंने कहा, ''नाथ, रक्षा कीजिए। एक वानर ने सब वन उजाड़ डाला है।

बहुत से रक्षक मारे गए हैं। अशोक वाटिका में शोक छा गया है। बस सीता का निवास बचा है।''

रावण क्रोध से तिलमिला उठा। बंदर को पकड़ने के लिए उसने सैनिकों का एक दल भेजा। राम-लक्ष्मण और सुग्रीव की जय बोलते हुए हनुमान ने सबको मार डाला। रावण को जब उसका पता लगा, तब उसने अपने वीर पुत्र अक्षयकुमार को हनुमान से युद्ध करने के लिए भेजा। अक्षयकुमार महारथी था। दोनों वीर भिड़ गए। अंत में एक बड़ा-सा वृक्ष उखाड़कर हनुमान ने राक्षसकुमार पर दे मारा। उसका रथ टूट गया और वह सारथी समेत मर गया।

पुत्र-वध का समाचार पाकर रावण के क्रोध का ठिकाना न रहा। उसने अपने सबसे बड़े बेटे मेघनाद को बुलाया। वह बड़ा वीर था। उसने इन्द्र को भी जीत लिया था। इसलिए उसका एक नाम इंद्रजीत भी हो गया था। रावण ने मेघनाद की प्रशंसा की और हनुमान पर विजय पाने के लिए परामर्श भी दिया। अपना बल वर्णन करके मेघनाद चल पड़ा।

हनुमान ने देखा कि एक बड़ा प्रबल योद्धा आ रहा है। वे आकाश में उड़ गए और पैंतरा बदल-बदल कर राक्षस के बाणों से बचने लगे। इन्द्रजीत के अनेक अमोघ बाण भी उन्होंने व्यर्थ कर दिए। हनुमान ने भी बड़े-बड़े वृक्ष उखाड़ कर मेघनाद पर फेंके। पर उस धनुर्धर ने उन्हें बीच में ही काटकर गिरा दिए। हनुमान किसी तरह मेघनाद के हाथ नहीं आ रहे थे। तब उसने ब्रह्मास्त्र चलाया। ब्रह्मास्त्र का मान रखने के लिए हनुमान ने उसे सहन किया और चोट खाकर वे गिर पड़े। मेघनाद की आज्ञा से राक्षसों ने उन्हें बाँध लिया। बँधते समय हनुमान ने अपना शरीर बहुत बढ़ा लिया। रस्सियों से खींचते हुए राक्षस उन्हें रावण की सभा में ले चले। रास्ते में वे उन्हें मुक्कों से ठोकते-पीटते जाते थे।

दरबार में पहुँचकर हनुमान ने देखा कि सोने के सिहासन पर लंका का स्वामी रावण बैठा है, उसका तेज सूर्य के समान है। हनुमान को वह सब प्रकार से योग्य और शक्तिशाली दिखाई दिया। रावण की आज्ञा से सेनापति प्रहस्त ने हनुमान से पूछा– "तुम कौन हो? यहाँ क्यों आये हो? अशोक वाटिका को तुमने क्यों उजाड़ा और राक्षसों को मारने का दुस्साहस तुमने कैसे किया?" रावण की ओर मुँह करके वे निडर होकर बोले– "महाराज! मैं किष्किंधा के राजा सुग्रीव का सेवक हूँ और महात्मा राम का दूत हूँ। मेरा नाम हनुमान है। राम की भार्या सीता को आप हर लाए हैं। उन्हीं की खोज में मैं यहाँ आया हूँ। वन्दिनी सीता से मैं मिल चुका हूँ। आपके दर्शन करना चाहता था, इसलिए मैंने अशोक वाटिका में उत्पात किया कि शायद इस तरह आपसे भेंट हो जाए। अपनी जान बचाने के लिए आपके योद्धाओं से मुझे लड़ना पड़ा। इसमें मेरा कोई अपराध नहीं। राजा सुग्रीव ने कहलाया है कि आप सीता को सम्मान सहित लौटा दें। महा धनुर्धर राम से आप किसी प्रकार युद्ध नहीं जीत सकते। खर-दूषण का हाल आप जान ही चुके हैं। अकेले राम ने दो घड़ी के भीतर ही उनका सर्वनाश कर दिया।"

हनुमान की बातें सुनकर रावण के क्रोध का ठिकाना न रहा। उसने आज्ञा दी कि इस दुष्ट वानर का वध कर दिया जाए। तभी रावण के छोटे भाई विभीषण ने निवेदन किया, 'महाराज! राजनीति के अनुसार दूत का वध नहीं किया जाता। आप नीतिवान हैं। दूसरे, जब यहाँ से जाकर आपके बल-विक्रम की बात करेगा, तब बैरियों का उत्साह ठंडा पड़ जाएगा।" रावण ने विभीषण की बात मान ली और आज्ञा दी कि वानर की पूँछ में तेल से तर कपड़े लपेट दिए जाएँ। फिर नगर में घुमाकर पूँछ में आग लगा दी जाए। जब पूँछ जल जाए तो इसे

छोड़ दिया जाए। पूँछ रहित बंदर अपने स्वामी को ले आएगा तो उसे भी मैं देख लूँगा।

रावण की आज्ञा पाकर राक्षस तेल से तर कर-करके कपड़े हनुमान की पूँछं में लपेटने लगे। हनुमान की लंबी पूँछ में ढेरों कपड़े लिपट गए। तब लंकावासी उनको नगर में घुमाने निकले। नर-नारियाँ और बच्चों की बहुत बड़ी भीड़ ताली पीटती हुई पीछे हो ली। कोई-कोई उनके ऊपर ईंट, पत्थर भी फेंक देता था। हनुमान को भी लंका देखने का अच्छा अवसर मिल गया। वे मन-ही-मन प्रसन्न थे। नगर में घुमाकर राक्षसों ने उनकी पूँछ में आग लगा दी।

देह बिसाल परम हरुआई, मन्दिर तें मन्दिर चढ़ धाई।
जरइ नगर भा लोग बिहाला, झपट लपट बहु कोटि कराला।।



आग लगी देखकर हनुमान ने शरीर छोटा किया और बंधन से निकल कर छलाँग लगाई। वे नगर के फाटक पर चढ़ गए और उसमें आग लगा दी। एक अटारी से वे दूसरी अटारी पर कूदते और आग लगा देते। सारी लंका जलने लगी। लंका का सोना बहकर समुद्र में जा पहुँचा। नगर में हाहाकार मच गया। पानी-पानी चिल्लाकर स्त्री बच्चे इधर-उधर भागने लगे। सबको अपनी जान बचाने की पड़ी। आग की लपटें आकाश चूम रही थीं और हनुमान भी अग्नि रूप हो रहे थे। सोने की लंका जलकर राख हो गई। हनुमान ने समुद्र में कूदकर अपनी पूँछ बुझाई।

अब हनुमान को सीताजी की चिन्ता हुई। उनको भय हुआ कि कहीं वे जल न गई हों। तब तो बड़ा ही अनर्थ हो जाएगा। वे इसी चिन्ता में डूब-उतरा रहे थे कि उनकी आँख अपनी पूँछ पर पड़ी, उसके बाल तक नहीं जले थे। उनको धीरज बँधा-जब मेरी ही पूँछ नहीं जली तो पतिव्रत धर्म से रक्षित सीताजी कैसे जल सकती हैं। तभी उनको देववाणी भी सुनाई दी—'लंका जल गई पर जानकी पर आँच भी नहीं पहुँची।' हनुमानजी उसे सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने सोचा कि मैं अपनी आँखों से देखता चलूँ। यह सोचकर वे फिर जानकी जी के पास पहुँचे और उन्हें प्रणाम किया। सीताजी ने प्रसन्न होकर अनेक आशीर्वाद दिए। वैदेही को अनेक तरह से ढाढ़स बँधाकर और श्रीराम के बल-पराक्रम का भरोसा देकर हनुमानजी लौट चले।

हनुमान का लंका से लौटना

सीताजी को प्रणाम करके हनुमान अरिष्ट पर्वत पर चढ़ गए। उन्होंने घोर सिंहनाद किया और समुद्र के उत्तरी तट की ओर उड़ चले।

अंगद, जामवंत, नल, नील आदि उनके साथी बड़ी चिंता से हनुमान की बाट जोह रहे थे। हनुमान का गर्जन सुनकर वे चौंक पड़े।

उन्हें लगा कि मानो दक्षिण का आकाश ही फट गया। हनुमान हवा को चीरते हुए चले आ रहे थे। वानरों ने देखा कि महाध्वनि समीप आती जा रही है। वे ऊँचे ऊँचे वृक्षों और पर्वत-शिखरों पर चढ़ गए। तभी उन्होंने देखा कि दक्षिण दिशा से एक तीव्र प्रकाश बढ़ता चला आ रहा है। कुतूहल से वे उसे देखने लगे। थोड़ी देर में साफ हो गया कि दिशाओं को प्रकाशित करते हुए और श्रीराम तथा सुग्रीव की जय-जयकार करते हुए वीर हनुमान लौट रहे हैं। बंदर तालियाँ पीट-पीटकर नाचने लगे। वे बार-बार अपनी पूँछ को चूमते थे। कभी पेड़ पर चढ़ जाते और फिर उतर आते। हनुमान के आते ही सबने उन्हें घेरलिया। अंगद और जामवंत ने उन्हें हृदय से लगा लिया। कुछ बंदरों ने पेड़ों से फूल तोड़कर उन पर बरसाए। फिर एक जगह बैठकर हनुमान ने लंका के सब समाचार सुनाए।

अंगद ने कहा, "चलो, अब शीघ्रता करो। बाकी हाल रास्ते में सुनते चलेंगे। सुग्रीव को शीघ्र समाचार देना है।" वे किष्किंधा की ओर चल पड़े। मार्ग में हनुमान ने बताया कि रावण ऐसा-वैसा बली नहीं है। उसको पराजित करने के लिए बुद्धि और बल दोनों की आवश्यकता है। हम लोगों को प्राणों की बाजी लगानी होगी।

चलते-चलते वे सुग्रीव के मधुवन नामक बाग में पहुँचे। सुग्रीव का मामा दधिमुख उसकी रखवाली करता था। यह बाग सुग्रीव को बहुत प्यारा था। साथियों को भूखा और थका देखकर अंगद ने आज्ञा दे दी कि भरपेट फल खाओ और मधु पियो। बंदरों ने मनमाने फल खाए और भालुओं ने मधु पिया। रखवालों को उन्होंने मार-पीटकर भगा दिया।

दधिमुख रोता-चिल्लाता सुग्रीव के पास पहुँचा। उसने अंगद की शिकायत करते हुए कहा कि दक्षिण से आए हुए सब वानरों ने मधुवन

उजाड़ दिया है। सुग्रीव समझ गए कि वे राम का काम कर सीताजी का समाचार जरूर ले आए हैं, नहीं तो मधुवन उजाड़ने की तो बात ही क्या, इधर आने की भी हिम्मत न करते। उन्होंने दधिमुख से कहा, ''वानरों को शीघ्र मेरे पास प्रस्रवण पर्वत पर भेजो।''दधिमुख द्वारा सुग्रीव की आज्ञा पाते ही वानर चल पड़े।

प्रस्रवण पर्वत पर पहुँचकर सब वानरों ने सुग्रीव को प्रणाम किया। अंगद और जामवंत ने सीताजी के मिलने की सब कहानी सुग्रीव को सुनाई। सुग्रीव ने हनुमान को हृदय से लगाया। वानरों को साथ लेकर सुग्रीव राम के पास गए और कहा कि हनुमान ने हम सबकी लाज रख ली। राम ने खड़े होकर हनुमान को हृदय से लगाया और लंका के समाचार पूछे। हनुमान ने दुःखी सीता की विपदा का सारा हाल कहा और सीता का संदेश भी कहा– ''यदि दो महीने के भीतर आर्य यहाँ नहीं आ जाते तो दुष्ट रावण मुझे मार डालेगा। वीरवर लक्ष्मण को भी उन्होंने शुभाशीर्वाद भेजे हैं।'' सीताजी का दिया हुआ चूड़ामणि भी हनुमान ने राम को दिया। चूड़ामणि देखकर राम रो पड़े और सुग्रीव से बोले– 'यह चूड़ामणि जानकी को विवाह के अवसर पर अपने पिता से मिला था। वे इसे कभी अलग नहीं करती थीं।' सीता के बारे में श्रीराम तरह-तरह के सवाल करने लगे। वह कैसी हैं? राक्षसियों में कैसे रहती हैं? उन्होंने तुम्हें कैसे पहचाना? उन्होंने क्या कहलाया है? हनुमान ने इन प्रश्नों का यथोचित उत्तर दिया और शोक छोड़कर युद्ध के लिए राम को उत्साहित किया। वे बोले, 'नाथ! अब शोक न करें। शोक से बल क्षीण होता है। युद्ध की तैयारी करें और सीता को विपत्ति से छुड़ाएँ।'

श्रीराम ने सुग्रीव से कहा, 'मित्र! अब देर न करो। अपनी सेना को रण यात्रा की आज्ञा दो।'

प्रश्न

1. समुद्र पारकर हनुमान लंका में किस प्रकार पहुँचे? मार्ग में उनको क्या-क्या कठिनाइयाँ हुई?
2. लंका-यात्रा में हनुमान ने अपने बल और अपनी बुद्धि दोनों का परिचय दिया है। दोनों के उदाहरण दो।
3. सीता और हनुमान की भेंट का संक्षेप में वर्णन करो।
4. लंका-दहन का संक्षेप में वर्णन करो।

बोध विचार

स्वामी-सेवक संबंध पर हनुमान का चरित्र हमें किस कर्त्तव्य का बोध कराता है?

6. युद्ध-कांड

रणयात्रा और सेतु रचना

सुग्रीव ने राम का आदेश पाते ही वानर-सेना को एकत्र होने के आदेश दिए। इधर राम हनुमान से परामर्श करने लगे। उन्होंने हनुमान से कहा, ''तुमने मेरे साथ और सारे रघुवंश के साथ जो उपकार किया है इसका बदला मैं नहीं चुका सकता। तीनों लोक देकर भी मैं तुमसे उऋण नहीं हो सकता। मैं तुम्हारे उपकार से दबा जा रहा हूँ।''

अपनी प्रशंसा सुनकर हनुमान ने सिर झुका लिया। सेना समुद्र कैसे पार करेगी, शक्तिशाली रावण को पराजित कैसे किया जाएगा आदि सोचते-सोचते वे शोक में डूब गए। तब सुग्रीव बोले, ''आप शोक छोड़कर क्रोध कीजिए। आपके प्रताप से समुद्र को रास्ता देना पड़ेगा। उद्यम से कार्य अवश्य सिद्ध होता और शोक से काम बिगड़ जाता है।''

इतने में लाखों वानर गरजते हुए आ पहुँचे। उनकी गर्जना से आकाश गूँज उठा। सुग्रीव की सेना देखकर राम प्रसन्न हुए और बोले, ''आज उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र है। इसी नक्षत्र में सीता का जन्म हुआ था। मैं इसी नक्षत्र में चलना चाहता हूँ। विजय यात्रा के लिए यह मुहूर्त शुभ है। सेना को कूच करने की आज्ञा दो।''

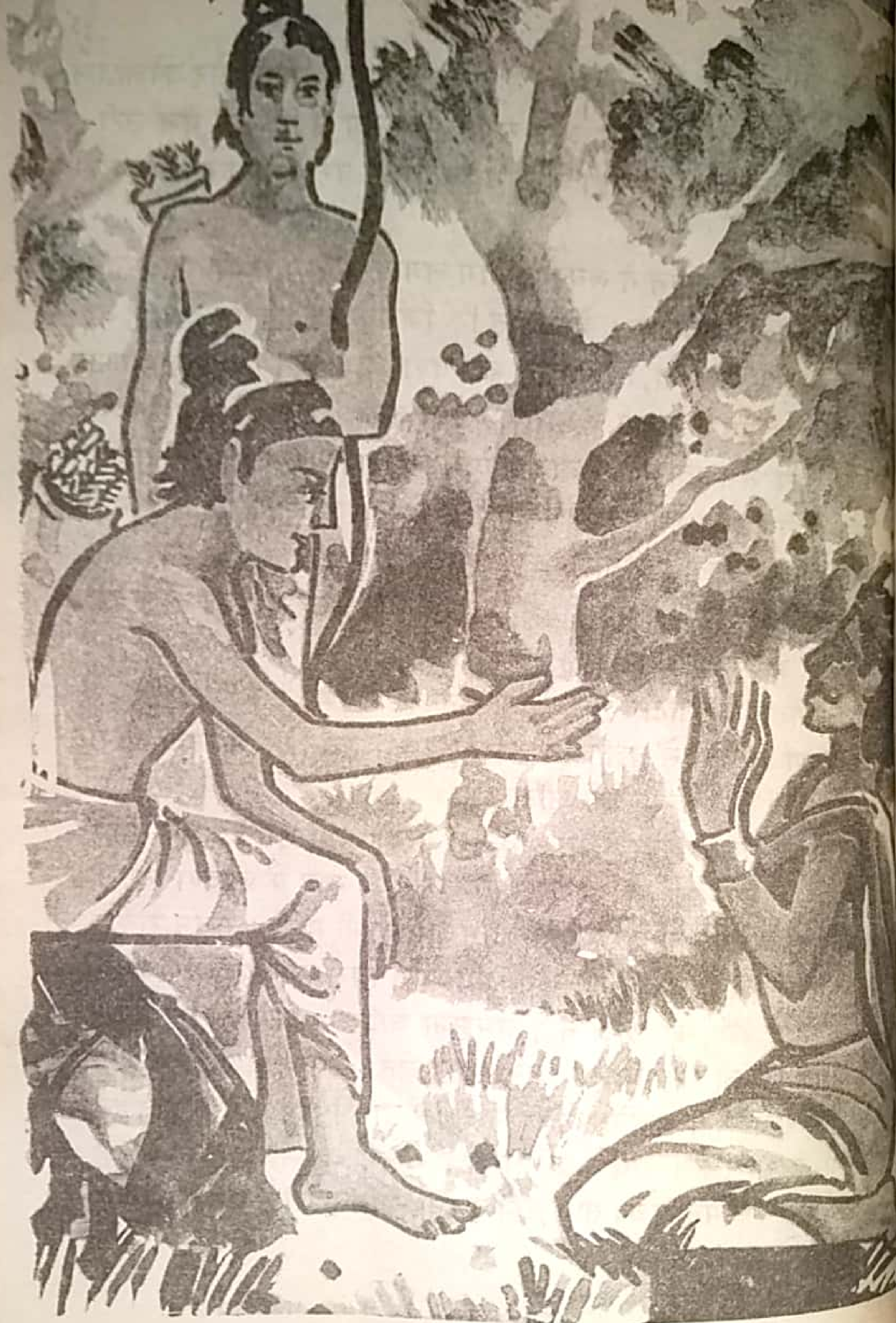
सुग्रीव ने सेनानायक नील को प्रस्थान की आज्ञा दी। सब यूथपति अपने-अपने दलों के साथ चल पड़े। हनुमान ने राम को और अंगद ने लक्ष्मण को अपने कंधों पर चढ़ा लिया। जामवंत और हनुमान सेना के पीछे के भाग की रक्षा करते हुए चले। वानर-वीर पेड़ों और

पहाड़ों को रौंदते हुए उछलते- कूदते चल दिए। चारों ओर कोलाहल भर गया। राम, लक्ष्मण और सुग्रीव की जय से दिशाएँ गूँज उठीं। सेना दिन-रात चलती रही और महेन्द्र पर्वत पर पहुँचकर उसने डेरा डाल दिया।

जब से हनुमान ने लंका में आग लगाई थी तब से वहाँ राक्षसों में बड़ा डर समा गया था। वे सोचते कि जिसके दूत का यह हाल है वह जब स्वयं आ जाएगा, तो न जाने क्या दशा होगी। नगर का हाहाकार देखकर विभीषण रावण के पास गए और बोले, ''भाई, मैं बिना पूछे ही नीति और समझदारी की बात आपसे कहने आया हूँ। मुझे आपका और सारी राक्षस जाति का कल्याण इसी में दिखाई देता है कि श्रीराम से वैर न किया जाए। सीताजी को राम के पास लौटा दें। आपको पता चल ही गया होगा कि वानरों की विशाल सेना लेकर वे समुद्र के उत्तरी तट पर आ पहुँचे हैं।''

सीता के लौटाने की बात सुनकर रावण ने क्रोधित होकर विभीषण को वहाँ से चले जाने के लिए कहा। उसने यह भी कहा कि मैं सीता को किसी तरह नहीं लौटाऊँगा।

तब रावण अपने सभा-भवन में गया। वहाँ उसने अपने पुत्रों, मंत्रियों, सेनापतियों को बुलाया और नगर की रक्षा के आदेश दिए। अपने बल का वर्णन करके उसने उनकी राय भी माँगी। सबने रावण के मन की बात कही। केवल विभीषण ने विरोध किया और कहा, बिना जाने शत्रु को छोटा नहीं समझना चाहिए। अगर तुममें कोई शक्ति होती तो हनुमान को ही न पकड़ लेते। रावण से उन्होंने कहा कि महाराज, मेरी प्रार्थना पर ध्यान दें। सीता को राम के पास भेज देने में ही कल्याण है। रावण यह सुनते ही आग बबूला हो गया। वह बोला– ''ऐसे मनुष्य का साथ नहीं करना चाहिए, जो ऊपर से तो हित



की बात करता हो और भीतर-भीतर शत्रु का शुभचिंतक हो। इससे तो क्रोधी साँप के साथ रहना अच्छा है।"

विभीषण को रावण ने तरह-तरह के अपशब्द कहे और अंत में यह भी कहा कि अगर तुम्हारा मन बैरी के साथ है तो उसी से जा मिलो। विभीषण ने कहा, 'मालूम होता है कि लंका के अब बुरे दिन आ गए हैं। मेरी बातें अब आपको अच्छी नहीं लगतीं। आप कहते हैं तो मैं जाता हूँ। कालवश नेक बात आपकी समझ में नहीं आती।' इतना कहकर अपने चार मंत्रियों के साथ वह आकाश मार्ग से राम से मिलने के लिए चल पड़ा।

राम की छावनी में पहुँचकर विभीषण ने दूर से ही आवाज़ लगाई– 'वानरो! मैं राक्षसों के राजा रावण का भाई हूँ। मैंने उसे सीता को लौटा देने की बात कही तो वह क्रोधित हुआ और भरी सभा में मेरा अपमान किया। मैं अब राम की शरण में आया हूँ। मुझे उनके पास पहुँचा दो।"

यह संदेश लेकर सुग्रीव श्रीराम के पास गए। सब बातें बताकर उन्होंने राम से कहा– "मुझे ऐसा लगता है कि ये पाँचों राक्षस रावण के गुप्तचर हैं। हमारा भेद लेने के लिए उन्होंने यह तरकीब निकाली है। अगर सच भी कहते हों तो भी उनका क्या ठिकाना। जो अपने भाई का न हुआ वह हमारा क्या होगा?" श्रीराम ने गंभीर होकर कहा– "मित्र! तुमने सलाह तो ठीक ही दी है, परंतु बुद्धिमानी यह होगी कि हम उसे अपनी ओर मिला लें। संभव है कि वह अपने किसी स्वार्थ के लिए भाई से अलग होकर हमसे मिल रहा हो। सब भाई लक्ष्मण और भरत की तरह नहीं होते।" सुग्रीव ने राम की बात का फिर विरोध किया, तो राम ने दृढ़ता से कहा, "मेरा नियम है कि मैं शरण में आए हुए को वापस नहीं लौटाता। अगर स्वयं रावण भी इस तरह आए तो

उसे भी मैं शरण दूँगा। मित्र! डरने की बात नहीं। इसलिए हे वीर! विभीषण को आदर सहित लाओ। वह हमारे-तुम्हारे बहुत काम आएगा।''

सुग्रीव की आज्ञा से हनुमान आदि वानर विभीषण को राम के पास ले आए। विभीषण ने दूर से ही अपना परिचय देते हुए राम के पैर पकड़ लिए और शरण माँगी। राम ने विभीषण का उचित सत्कार किया और फिर अपने पास बैठाकर लंका का हाल पूछा। विभीषण ने कहा, 'रावण का बल और पराक्रम तो सारे संसार में प्रसिद्ध है। आपने भी सुना ही होगा। उसने देवताओं को जीत कर यमराज को भी बाँध लिया था। जब वह गदा लेकर चलता है तो पृथ्वी काँप उठती है। हमारा मँझला भाई कुम्भकर्ण युद्ध में पहाड़ के समान अड़ जाता है। बड़े-बड़े पत्थरों की चोट भी उसे फूल जैसी लगती है। रावण के बड़े पुत्र मेघनाद ने तो इन्द्र को ही जीत लिया था। उनके नाम से देवता खोहों और कंदराओं में घुस जाते हैं। रावण का सेनापति प्रहस्त जाना माना योद्धा है। कैलाश पर्वत पर उसने जो युद्ध किया उसकी चर्चा संसार भर में हो रही है। उसके अतिरिक्त अतिकाय, अकंपन, महोदर आदि अनेक वीर लंका में हैं। लंका नगरी सब ओर से सुरक्षित है। उसे जीतने के लिए बल और बुद्धि दोनों की आवश्यकता है। रावण के पास तप और वरदान का भी बल है। शंकर और ब्रह्मा से वर प्राप्त कर वह अपने को अजेय मानता है।'

विभीषण की बात सुनकर श्रीराम ने दृढ़ता से कहा, 'विभीषण! तुम चिन्ता न करो। मैं तुम्हें वचन देता हूँ कि इन सबको मारकर तुम्हें लंका का राज दे दूँगा।' विभीषण ने राम के चरणों में प्रणाम करके कहा—'श्रीराम! इस युद्ध में मैं पूरी तरह से आपकी सहायता करूँगा। अपने प्राणों को भी न्यौछावर कर दूँगा।'

तब श्रीराम ने लक्ष्मण को आज्ञा दी कि समुद्र का जल ले आओ। जल आने पर राम ने सबके सामने विभीषण का राजतिलक कर दिया।

अब समुद्र को पार करने की समस्या पर विचार होने लगा। यह तय हुआ कि पहले समुद्र से ही विनती की जाए कि वह रास्ता दे दे। अगर न माने तो दूसरा उपाय किया जाए। इस निश्चय के अनुसार तीन दिन तक राम कुशा बिछाकर समुद्र से विनती करते रहे। जब ... न माना तो उन्होंने क्रोधित होकर धनुष पर कठिन बाण चढ़ाया। समुद्र में भीषण हलचल होने लगी। धुआँ उठने लगा। तट पर जहाँ-तहाँ भूमि फट गई। समुद्र में रहने वाले जलचर अकुला उठे। तब सागर लहरों के बीच से प्रकट हुआ और बोला– "भगवन् क्षमा करें। मैं एक उपाय बताता हूँ। आपकी सेना में नल नाम का एक वानर है। उसने अपने पिता से समुद्र पर भी पुल बाँधने की विद्या सीखी है। वह पुल बना देगा और वानर सेना पार उतर जाएगी। आपने जो बाण चढ़ा लिया है, उससे मेरे उत्तरी तट पर बसे हुए दुष्टों का संहार कर दें।" इतना कहकर समुद्र अदृश्य हो गया। राम के बाण छोड़ते ही दुष्टों की सारी भूमि रेगिस्तान बन गई।

अगले दिन समुद्र पर पुल बनने लगा। सारी वानर सेना पत्थर और वृक्ष ढो-ढो कर लाने लगी। बड़ी-बड़ी शिलाएँ वे समुद्र में फेंकते और नील गेंद की भाँति उन्हें लपक कर ले लेते। वे सेतु रचना करते जाते। पाँच दिन में सेतु बँधकर तैयार हो गया। ऐसा लगता था कि सेतु से समुद्र के दो भाग हो गए हैं। सेतु बँधते ही विभीषण कुछ वानर वीरों को लेकर अपने अनुचरों के साथ पुल के उस छोर पर चला गया और गदा लेकर पुल की रक्षा करने लगा। समस्त वानर सेना पुल पार कर लंका में पहुँच गई। समुद्र के निकट सुबेल पर्वत पर राम की सेना ने

पड़ाव डाल दिया। वानर जहाँ-तहाँ फल फूल खाने लगे। विभीषण तथा सुग्रीव के साथ बैठकर श्रीराम विचार करने लगे कि युद्ध कैसे शुरू किया जाए।

युद्ध की तैयारियाँ और अंगद का लंका जाना

रावण ने जब यह सुना की समुद्र पर पुल बँध गया है और राम की सेना पार कर लंका में पहुँच चुकी है, तो उसको बड़ा विस्मय और भय हुआ। उसने कभी यह सोचा ही न था कि समुद्र पर भी पुल बन सकता है। अब उसने राम की सेना का बल जानना चाहा। शुक और सारण नाम के चतुर मंत्रियों को बुलाकर उसने कहा– "राम की सेना में जाकर गुप्त रूप से बानरों के बल का पता लगाओ।" शुक और सारण

अति उतंग गिरि पादप लीलहिं लेहिं उठाइ।
आनि देहिं नल नीलहि रचहिं ते सेतु बनाइ।।



बड़ी माया जानते थे। बंदर बनकर वे राम की सेना में घुस गए और सावधानी से सब जगह देखने लगे, हर बात का पता लगाने लगे। उन्होंने देखा कि राम की सेना ने सारा सुबेल पर्वत ढँक लिया। उसके अलावा पुल से चली ही आ रही है। शुक-सारण आँख बचाकर देख रहे थे जिससे उन्हें कोई पहचान न पाए। पर विभीषण को वे धोखा न दे सके। विभीषण ने ताड़ लिया कि वे कौन हैं। उन्हें पकड़वा कर वे राम के पास गए। पूछने पर उन्होंने राम को बता दिया कि हम रावण के गुप्तचर हैं। शुक और सारण हमारा नाम है। हम वानर सेना का भेद लेने आए हैं।

राम मुस्करा कर बोले, 'भेद ले चुके या अभी और कुछ लेना है! कुछ पूछना चाहो, तो पूछ भी लो और खुद देखना चाहो तो विभीषण तुम्हें दिखा भी देंगे। जब लंका लौटकर जाओ तो अपने स्वामी से कहना कि 'जिस बल पर सीता को चोरी से ले गया है, उस बल को अब दिखाए। कल से मेरे बाण लंका पर बरसने लगेंगे।' विभीषण से उन्होंने कहा– ''इन्हें छोड़ दो और जाने दो, इन विचारों का क्या दोष!'' राम की जय-जयकार करते हुए शुक-सारण लंका लौट गए।

लंका पहुँचकर शुक और सारण सीधे रावण के पास गए और उन्होंने राम के बल तथा उनके कोमल स्वभाव की बड़ाई की। उनकी बात सुनी-अनसुनी करके रावण उन्हें सबसे ऊँची अँटारी पर ले गया और बोला– ''राम की सेना के प्रमुख वीर मुझे दिखाओ।'' सारण ने कहा कि देखिए जो इस ओर मुँह किए बार-बार गरज रहा है और जिसकी गरज से लंका काँप रही है, वह सुग्रीव का सेनापति नील है और जो तिरछी आँखें किए बार-बार जम्हाई ले रहा है वह पहाड़ जैसे शरीरवाला बालि का पुत्र अंगद है, लग रहा है मानो वह युद्ध के लिए ललकार रहा है। अंगद के पीछे नल है जिसने समुद्र पर पुल बना दिया

है। वह देखिए रीछों का झुंड, उसके आगे बूढ़े जामवंत खड़े हैं और उस बंदर को आप पहचानते ही होंगे जो मस्त हाथी की चाल से चल रहा है, लंका जलानेवाला वह केसरी-पुत्र हनुमान। उसके समीप ही महाधनुर्धर राम हैं जिनकी पत्नी को आप ले आए हैं। उनकी बाईं ओर मंत्रियों सहित विभीषण बैठे हैं। राम ने उनको लंका का राजा बना दिया है। राम और विभीषण के बीच में वानरराज सुग्रीव बैठे हैं। सेना के वानरों की गिनती नहीं की जा सकती। इस सेना को जीतना बड़ा कठिन है। यों अकेले राम ही लंका के लिए काफी हैं। मेरी राय यह है कि सीता को लौटाकर राम से मित्रता कर लें। शुक ने भी ऐसी ही बातें कहीं। यह सुनते ही रावण लाल-लाल आँखें करके बोला– ''दुष्टो! तुम्हें इतना भी नहीं मालूम कि अपने राजा के सामने शत्रु की बड़ाई नहीं करनी चाहिए। मेरे सामने से हट जाओ।''

इतना कहकर रावण अंतःपुर में चला गया। वहाँ भी उसको यही राय मिली कि राम से सुलह करना ही ठीक होगा। परंतु रावण ने जो मन में ठान लिया था, उससे डिगा नहीं। उसने सेना को तैयार होने के आदेश दिए।

इधर राम ने भी अपनी सेना को चार भागों में बाँट दिया और यह बता दिया कि कौन-सा दल लंका के किस द्वार पर आक्रमण करेगा। उन्होंने यह भी कहा कि लक्ष्मण और मैं तथा विभीषण और उनके मंत्री मानव रूप में रहेंगे। शेष सब वानर के बाने में ही युद्ध करेंगे। सुवेल पर्वत पर चढ़कर राम उस रात लंका का निरीक्षण करते रहे। सबेरा होते ही उन्होंने लंका को चारों ओर से घेरने का आदेश दिया। बंदरों के सिंहनाद से दिशाएँ गूँज गईं।

राजनीति पर विचार करके राम ने अंगद को बुलाकर कहा कि युद्ध शुरू करने के पहले सुलह का अंतिम प्रयास कर लिया जाए। तुम

मेरे दूत बनकर लंका जाओ। अगर सीता को लौटाने को रावण तैयार न हो तो उससे कह देना कि हथियार उठाने से पहले वह अपना श्राद्ध भी कर ले, क्योंकि फिर उसके कुल में कोई न बचेगा।

अंगद उड़कर लंका पहुँचे और निडर होकर रावण की सभा में चले गए। रावण से उन्होंने कहा– 'मैं बालि का पुत्र अंगद हूँ। आप में और मेरे पिता में मित्रता थी। इसी नाते आपके पास आया हूँ। मैं आपको अंतिम चेतावनी देना चाहता हूँ। जानकीजी को लौटा दें, नहीं तो लंका में कोई जीवित न बचेगा।' रावण बोला– ''अंगद तुमको लज्जा आनी चाहिए। अपने पिता के शत्रु की तुम दासता कर रहे हो। मेरे मित्र के तुम पुत्र हो, तो आओ मेरी ओर आकर अपने पिता की मृत्यु का बदला लो।'' इतना सुनते ही अंगद को बहुत क्रोध आया और उन्होंने रावण से बहुत बुरा भला कहा। रावण ने आज्ञा दी– 'राक्षस वीरो! इस धृष्ट वानर को पकड़कर मार डालो।' चार-पाँच राक्षस अंगद की ओर झपटे। अंगद ने उनको पकड़कर मसल दिया। इसके बाद वे रावण के महल पर कूदकर चढ़ गए। महल के कंगूरों को ढहाकर वह आकाश मार्ग से ही राम के पास पहुँच गए। अंगद के पहुँचते ही राम-दल ने लंका के चारों द्वारों पर चढ़ाई कर दी।

भयंकर मोर्चा

लंका के चारों द्वारों पर वानर सेना ने आक्रमण कर दिया था। राम-लक्ष्मण, सुग्रीव, जामवंत और विभीषण के नेतृत्व में वानर सेना ने उत्तर से आक्रमण किया। रावण की आज्ञा से उनकी चतुरंगिणी सेना चारों फाटकों से निकल पड़ी और राक्षसेन्द्र रावण की जय बोलती हुई वानर सेना पर टूट पड़ी। वंदरों ने उस पर पेड़ और पत्थर बरसाने शुरू किए। दुर्ग की खाई उनसे पट गई। बंदर किलकारी मारते हुए कोट पर चढ़ गए और राक्षसों को पकड़-पकड़ कर नीचे फेंकने लगे।

दाँत, नख, थप्पड़ और घूँसा उनके हथियार थे। राक्षस उन्हें शूल और तलवारों से काट रहे थे। हाथियों के चिंघाड़ने, घोड़ों के हिनहिनाने और रथों के घरघराहट का कोलाहल चारों ओर भर गया। दोनों ओर के बहुत-से वीर मारे गए। श्रीराम के बाणों के आगे जो भी आया, मारा गया।

लड़ते-लड़ते शाम हो गई। अब मेघनाद ने अपनी ओर का मोर्चा सँभाला। युवराज अंगद ने उसके घोड़ों और सारथी को मार डाला। तब वह छिपकर युद्ध करने लगा। माया के कारण वह किसी को दिखाई नहीं देता था। उसने सारी वानर सेना को अपने पैने बाणों से छेद डाला और नागबाणों से राम-लक्ष्मण को मूर्च्छित कर दिया। विजय-घोष करता हुआ वह लंका लौट गया। उसने पिता को बताया कि राम-लक्ष्मण मारे गए।

राम के मारे जाने का समाचार सुनकर रावण बड़ा खुश हुआ। मेघनाद को गले से लगाकर वह उसकी वीरता की प्रशंसा करने लगा। अशोक वाटिका से राक्षसों को बुलाकर रावण ने कहा कि पुष्पक विमान में सीता को ले जाकर दिखा दो कि राम और लक्ष्मण मरे पड़े हैं। वे अपनी आँखों से यह दृश्य देख लें। राक्षसियों ने रावण की आज्ञा का पालन किया। राम-लक्ष्मण को पड़ा देखकर सीता रोने लगीं। तब त्रिजटा ने कहा, ''देखो, इनके मुख पर मृत्यु का कोई चिह्न नहीं है। वे केवल मूर्च्छित हैं। थोड़ी देर में उठ बैठेंगे।'' विमान अशोक वाटिका को लौट गया। इधर राम-लक्ष्मण को अचेत देखकर सुग्रीव रोने लगे। विभीषण ने उन्हें धैर्य बँधाते हुए कहा– 'यह समय रोने का नहीं है। अपनी सेना सँभालिए। मैं राम-लक्ष्मण की चिकित्सा का प्रबंध करता हूँ।'

थोड़ी देर में राम की मूर्च्छा टूटी। उन्होंने लक्ष्मण को अचेत और

खून से लथपथ देखा। वे तरह-तरह से विलाप करने लगे– 'मैं माता सुमित्रा को अब कैसे मुँह दिखाऊँगा। हाय, मैं विभीषण को लंका का राज न दे सका। सुग्रीव तुम सेना लेकर किष्किन्धा लौट जाओ। मैं भी यहीं प्राण दे दूँगा।' तभी विभीषण गदा लिए आते दिखाई दिए। वानरों ने समझा कि मेघनाद फिर आ गया। उनमें भगदड़ मच गई। जामवंत ने सबको बताया कि ये मेघनाद नहीं, महात्मा विभीषण हैं।



श्रीराम को विलाप करते देख विभीषण ने समझाया– 'वीर पुरुष रणभूमि में रोते नहीं। शोक से उत्साह का नाश होता है और सब काम बिगड़ जाते हैं। आप तो वीर शिरोमणि हैं और हम सबको रास्ता दिखाने वाले हैं। लक्ष्मण चिकित्सा से ठीक हो जाएंगे। वे केवल मूर्च्छित हैं।'

वैद्यराज सुषेण ने कहा कि अगर संजीवनी और विशल्यकरणी औषधियाँ मिल जाएँ तो राम-लक्ष्मण अभी स्वस्थ हो जाएँगे।

ये बातें हो ही रही थीं कि पक्षियों के राजा गरुड़ आ गए। उनके आते ही राम-लक्ष्मण नागपाश से छूट गए। उनके घाव भर गए और वे पूरी तरह स्वस्थ हो गए। यह देखकर वानर सेना हर्ष-ध्वनि करने लगी।

उधर रावण को जब यह समाचार मिला तो उसने एक-एक करके कई राक्षस वीर लड़ने के लिए भेजे। पहले धूम्राक्ष आया। उसको हनुमान ने मार डाला। फिर बज्रदंष्ट्र आया, वह राम-लक्ष्मण से लड़ने लगा। अंगद ने बढ़कर तलवार से उसका सिर काट डाला। उसके मारे जाने पर रावण ने अकंपन को भेजा। उसके प्रहार से वानर सेना भागने लगी। तब वीर हनुमान आगे आ गए। राक्षस के तीखे बाणों की परवाह न करके उन्होंने एक बड़ा-सा पेड़ उस पर फेंका। अकंपन कुचलकर मर गया।

तब रावण का सेनापति प्रहस्त लड़ने के लिए आया। नील ने उससे युद्ध किया और उसका धनुष तोड़ डाला। तब प्रहस्त ने नील पर मूसल से प्रहार किया। उसकी चोट से नील की आँखों के आगे अँधेरा छा गया। फिर संभल कर उन्होंने एक बड़ी भारी शिला से प्रहस्त को कुचल कर मार डाला।

इन योद्धाओं के मारे जाने पर रावण स्वयं युद्ध के लिए चल पड़ा। बहुत-से राक्षस वीर मेघनाद, अतिकाय, महोदर, नरांतक आदि उसके साथ थे। रावण ने पहला वार सुग्रीव पर किया और उनको अचेत कर दिया। फिर उसने सब प्रमुख वानर वीरों को घायल कर

दिया। तब लक्ष्मण ने युद्ध करने की आज्ञा माँगी। हनुमान आदि वीर वानरों के साथ श्रीराम ने लक्ष्मण को युद्ध के लिए भेजा। पहले हनुमान से रावण की भिड़ंत हुई। दोनों ने एक-दूसरे को मुक्का मारा। मुक्के की चोट से रावण लड़खड़ा गया और हनुमान के बल की प्रशंसा करने लगा। अब लक्ष्मण और रावण का बाण-युद्ध होने लगा। पहले रावण ने बाणों की मार से लक्ष्मण को विचलित कर दिया। लक्ष्मण ने रोष करके रावण का धनुष काट दिया और बाणों से उसका शरीर छेद डाला। उसे लगा कि लक्ष्मण प्राण ही ले लेंगे। तब रावण ने उन पर ब्रह्मशक्ति चला दी। शक्ति के लगते ही लक्ष्मण गिर पड़े। रावण उनके पास चला गया और उन्हें उठाकर लंका ले जाने की कोशिश करने लगा। पर किसी तरह उठा न सका। यह देखकर हनुमान दौड़े आए। उन्होंने रावण को एक घूँसा मारा जिससे वह मूर्च्छित हो गया। हनुमान ने लक्ष्मण को उठाकर राम के पास पहुँचा दिया। राम के पास पहुँचते ही वे स्वस्थ होकर उठ बैठे। इधर रावण की मूर्च्छा टूटी और वह फिर बाणों की वर्षा करने लगा। अब राम ने अपना धनुष उठाया और हनुमान के कंधे पर बैठकर वे युद्ध करने लगे। राम ने अपने पैने बाणों से पहले रावण का रथ नष्ट कर दिया। फिर उसकी छाती में अनेक बाण मारे। रावण का मुकुट भी पृथ्वी पर गिर पड़ा। तब श्रीराम बोले, 'रावण! जाओ! आज मैं तुम्हें छोड़ता हूँ, अस्त्र-शस्त्र से सज्जित होकर और नए रथ में बैठकर फिर आना।' लज्जित होकर रावण लौट गया। इस प्रकार राम-रावण संग्राम की पहली मुठभेड़ समाप्त हुई।

कुंभकर्ण का युद्ध

राम के हाथों पराजित होकर रावण अपने मन में बड़ा लज्जित हुआ।

उसका अहंकार चूर-चूर हो गया। राम को जैसा उसने समझ रखा था उससे वे कहीं बढ़कर निकले। उसके भीतर का बल थक गया। उसके बहुत-से वीर मारे जा चुके थे। सेनापति प्रहस्त भी मारा गया। इस संकट के समय उसने अपने छोटे भाई कुंभकर्ण को जगाने की बात सोची। राक्षसों की एक टोली के साथ बहुत-से भैंसे और मदिरा के घड़े भेजे। एक दिन जगकर कुंभकर्ण छह महीने सोता था।

सब राक्षस मिलकर कुंभकर्ण को जगाने लगे। उन्होंने बाजे बजाए, उसके हाथ-पैर खींचे, बाल और कान खींचे, फिर भी वह नहीं जगा। जब उस पर हाथी दौड़ाए गए, तब कहीं वह जागा। अँगड़ाई लेता हुआ वह उठ बैठा। उठते ही उसने कई घड़े मदिरा पीकर बहुत-सा कच्चा मांस खाया। तब कुंभकर्ण ने पूछा, ''मुझे किसने और क्यों जगाया है?'' मंत्री ने कहा, ''राक्षसेन्द्र आपको याद कर रहे हैं। बड़ी देर से आपकी प्रतीक्षा में हैं।''

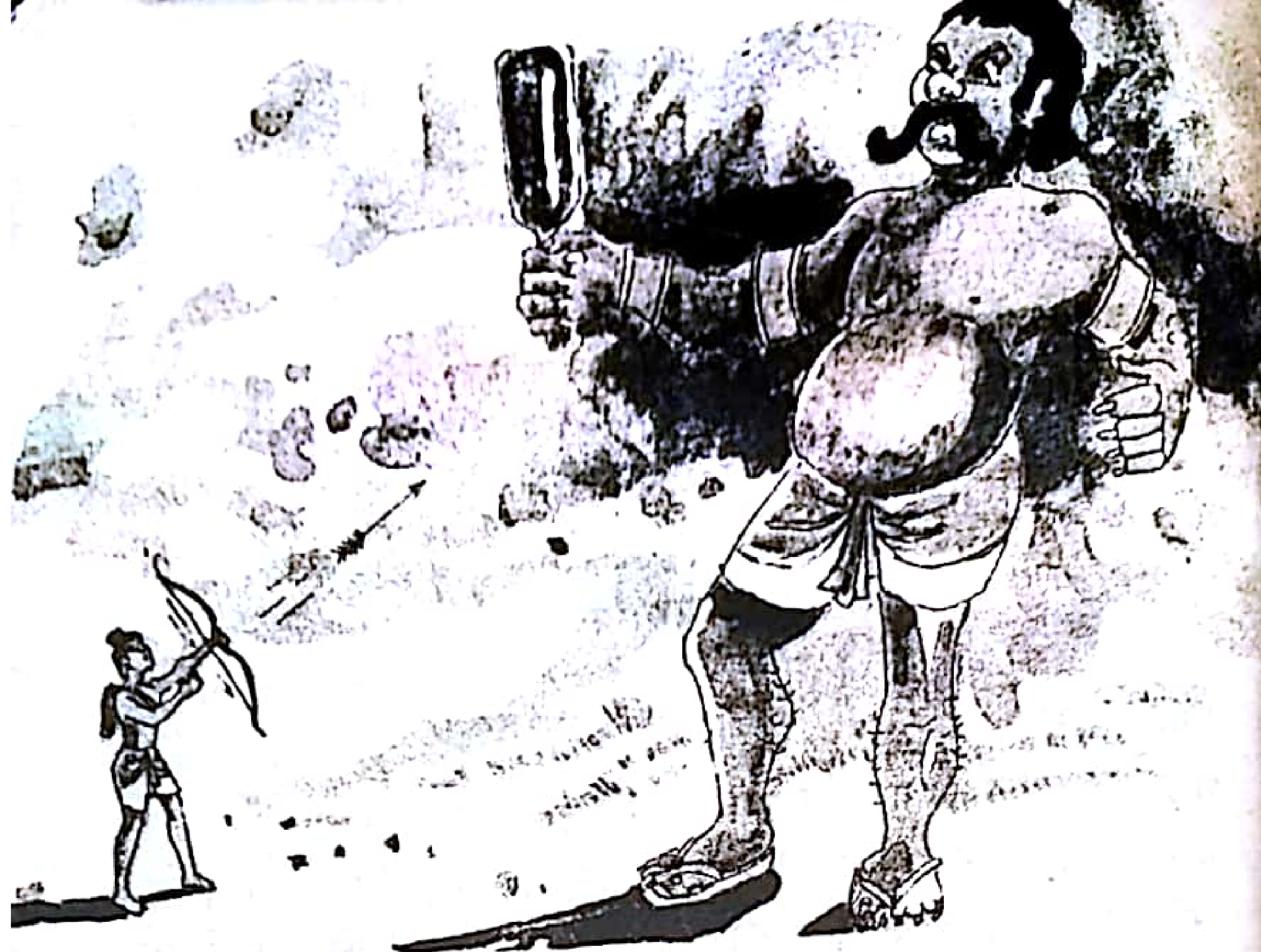
कुंभकर्ण रावण के पास पहुँचा और उसके चरणों में प्रणाम किया। फिर रावण से जगाने का कारण पूछा। रावण बोला, 'वीरवर! तुम सो रहे थे। तुम्हें नहीं मालूम, इस बीच यहाँ कितना अनर्थ हुआ है। राम की वानर सेना समुद्र पर पुल बनाकर लंका में आ गई है और वह नगर का घेरा डाले पड़ी है। कई दिन से युद्ध चल रहा है। हमारे अनेक बड़े-बड़े वीर मारे गए हैं। सेनापति प्रहस्त भी वीर गति को प्राप्त हुए। अब तुम्हारा ही सहारा है।''

कुंभकर्ण हँसा और बोला, ''हमने तुम्हें पहले ही बताया था कि बुरे कर्मों का फल बुरा ही होता है। तुमने हमारी बात पर कोई ध्यान ही नहीं दिया। मंदोदरी और विभीषण की सलाह को भी तुमने ठुकरा

दिया।" रावण कुछ रुष्ट-सा होकर बोला, "भाई, मैंने तुम्हें उपदेश सुनाने के लिए नहीं जगाया। जो हुआ सो हुआ। मुझे तुम्हारे पुरुषार्थ की जरूरत है। तुम्हारे पुरुषार्थ से ही मेरा संकट दूर हो सकता है।" कुंभकर्ण को रावण पर दया आई। उसने कहा, "तुम चिन्ता न करो। अब मैं रणभूमि को जा रहा हूँ। राम-लक्ष्मण को मारकर तुम्हें सुखी करूँगा।"

कुंभकर्ण की बात सुनकर रावण प्रसन्न हुआ और उसकी वीरता की प्रशंसा करके युद्ध के लिए उसे विदा किया।

हाथ में एक बड़ा-सा त्रिशूल लेकर कुंभकर्ण दुर्ग के बाहर आ गया। कुंभकर्ण को देखते ही वानर सेना में भगदड़ मच गई। अंगद ने बड़ी कठिनाई से उनको रोका। वे उस पर बड़े-बड़े वृक्ष और बड़ी-बड़ी शिलाएँ फेंकने लगे। शिलाएँ उसके शरीर में ऐसे लगतीं जैसे हाथी को आक फल की चोट लगे। कुंभकर्ण की सेना से तो जहाँ-तहाँ वानर वीर भिड़ गए, पर उसके सामने आने का कोई साहस न करता। हनुमान आगे बढ़े। उन्होंने बड़ी भारी शिला फेंककर उसे थोड़ा-सा घायल किया। कुंभकर्ण ने अपने त्रिशूल से उनका हृदय फाड़ दिया। रक्त की धार बह निकली। हनुमान को व्याकुल होते देखकर वानर सेना में त्राहि-त्राहि मच गई। कुंभकर्ण ने अनेक प्रमुख वानर वीरों को मारकर अचेत कर दिया। तब अंगद आगे बढ़े। कुंभकर्ण के वार को बचाते हुए उन्होंने उसकी छाती में घूँसा मारा। थोड़ी देर के लिए कुंभकर्ण मूर्च्छित हुआ, फिर उसने अंगद और सुग्रीव दोनों को अचेत कर दिया। सुग्रीव को पकड़कर वह लंका की ओर ले चला। मार्ग में सुग्रीव की मूर्च्छा टूटी। उन्होंने अपने पैने नखों और दाँतों से उसके नाक-कान काट डाले और सीना फाड़ दिया। रक्त बहता देखकर कुंभकर्ण ने सुग्रीव को उछालकर पृथ्वी पर दे मारा। वे



तुरंत उठकर भागे। कुंभकर्ण भी लौट पड़ा और वानर सेना पर टूट पड़ा। अब लक्ष्मण कुंभकर्ण से युद्ध करने लगे। लक्ष्मण की बाण-वर्षा से कुंभकर्ण प्रसन्न हुआ। वह लक्ष्मण से बोला, ''वीरवर! तुम युद्ध-विद्या में प्रवीण हो। मैं मान गया। अब मुझे राम के सामने पहुँचने दो। मैं अब उन्हीं को मारना चाहता हूँ।''

लक्ष्मण ने संकेत से राम को दिखा दिया। राम तैयार खड़े थे। युद्ध छिड़ गया। दाहिने हाथ में कुंभकर्ण एक भारी मुग्दर लिए था। एक दिव्य बाण चलाकर राम ने कुंभकर्ण की वह भुजा काट दी। भुजा के नीचे कितने ही वानर दब गए। तब बाएँ हाथ से वृक्ष उखाड़कर कुंभकर्ण राम की ओर दौड़ा। दूसरी भुजा भी राम ने काट डाली। तब वह मुँह फाड़कर राम की ओर दौड़ा। राम ने उसके दोनों पैर काट डाले। फिर भी वह नहीं मरा। तब श्रीराम ने एक बाण से उसका सिर धड़ से अलग कर दिया। वानर सेना में श्रीराम की जय-जयकार होने लगी। बची-खुची राक्षस सेना लंका की ओर भाग गई।

लक्ष्मण-मेघनाद युद्ध

कुंभकर्ण के वध से रावण का दिल टूट गया। वह शोक से मूर्च्छित होकर गिर पड़ा और तरह-तरह से विलाप करने लगा, "आज मेरी दाहिनी भुजा कट गई। देवताओं! आज तुम्हारा डर दूर हो गया। भाई! तुम्हारे मरने से लंका अनाथ हो गई। संकट में अब मेरा कोई सहारा नहीं।"

त्रिलोक विजयी रावण को विलाप करते देख त्रिशिरा, देवांतक, नरांतक आदि उसके पुत्र आ गए और रावण को ढाढ़स बँधाने लगे। वे बोले, "आज्ञा दें तो हम अभी जाकर राम-लक्ष्मण को पकड़कर आपके सामने ले आएँ।" रावण ने उन्हें छाती से लगाकर आशीर्वाद दिया और अपने भाई महापाश्‍र्व और महोदर के साथ अपने पुत्रों को युद्ध के लिए भेजा। अंगद नरांतक से भिड़ गया। नरांतक ने अंगद की छाती पर भाला मारा। भाला टूट गया। दोनों अब मल्लयुद्ध करने लगे। नरांतक के मुक्के से अंगद को मूर्च्छा आ गई। फिर सचेत होकर उन्होंने नरांतक के हृदय पर ऐसा मुक्का मारा कि वह सदा के लिए सो गया। अब देवांतक, त्रिशिरा आदि सब राक्षस अंगद पर एक साथ टूट पड़े। अंगद को घिरा हुआ देखकर हनुमान और नील दौड़े आए। हनुमान ने देवांतक को मार डाला और नील ने महोदर को। फिर हनुमान ने त्रिशिरा का भी काम तमाम कर दिया। अब महापाश्‍र्व बच रहा। वानर ऋषभ उससे जाकर भिड़ गया और थोड़ी देर में ही मुक्के से उसे मार डाला।

अब अतिकाय नाम का राक्षस युद्ध के लिए आया। उसका शरीर कुंभकर्ण के समान विशाल था। ब्रह्मा को प्रसन्न कर उससे कई वरदान ले लिए थे। वानर सेना ने भी समझा कि मरा हुआ कुंभकर्ण फिर लड़ने आ गया। वे डर के मारे भागने लगे। अतिकाय बिना बाण

छोड़े रथ दौड़ाता हुआ श्रीराम के पास पहुँचा और बोला, 'हिम्मत हो तो मुझसे युद्ध करो, नहीं तो चुपचाप लौट जाओ। मैं लक्ष्मण से नहीं लड़ूँगा। वह अभी बालक है।'

लक्ष्मण ने उसे ललकारा, पहले बालक से ही निपट लो। लक्ष्मण उस पर वाण चलाने लगे, परंतु अतिकाय पर उनका कोई असर नहीं हुआ। उसके दिव्य कवच से टकराकर वे व्यर्थ हो जाते। तब लक्ष्मण ने उसके घोड़ों और सारथी को मार डाला और रथ को तोड़ दिया। अपने तीखे बाणों से अतिकाय ने लक्ष्मण को क्षत-विक्षत कर दिया। स्वस्थ होने पर लक्ष्मण ने अनेक अमोघ वाण छोड़े पर अतिकाय का बाल बाँका न हुआ। तब लक्ष्मण ने कोई चारा न देख अतिकाय पर ब्रह्मास्त्र चला दिया। अतिकाय का सिर कटकर अलग जा गिरा। राक्षस सेना भागकर लंका में घुस गई। इधर राम दल में लक्ष्मण की जय-जयकार होने लगी।

अपने वीर पुत्रों और बंधु-बांधवों के मारे जाने से रावण बिल्कुल हताश हो गया। वह यह भी सोचने लगा कि विभीषण की बात मान लेता तो यह दिन नहीं देखना पड़ता। उसे न अब राज्य की कामना थी और न सीता के प्रति आसक्ति।

रावण का ज्येष्ठ पुत्र मेघनाद पिता के पास पहुँचा। रावण को तरह-तरह से समझाकर उसने कहा, 'मेरे रहते आप क्यों चिन्ता करते हैं। दो घड़ी के भीतर ही मैं राम-लक्ष्मण को मारकर आपको सुखी बनाता हूँ।' रावण की हिम्मत बँधी। उसने राक्षसों को आदेश दिया– नगर द्वारों की सावधानी से रक्षा की जाए। अशोक वाटिका का पहरा उसने और भी कड़ा कर दिया। दिव्य अस्त्र-शस्त्र लेकर मेघनाद युद्ध के लिए चल पड़ा।

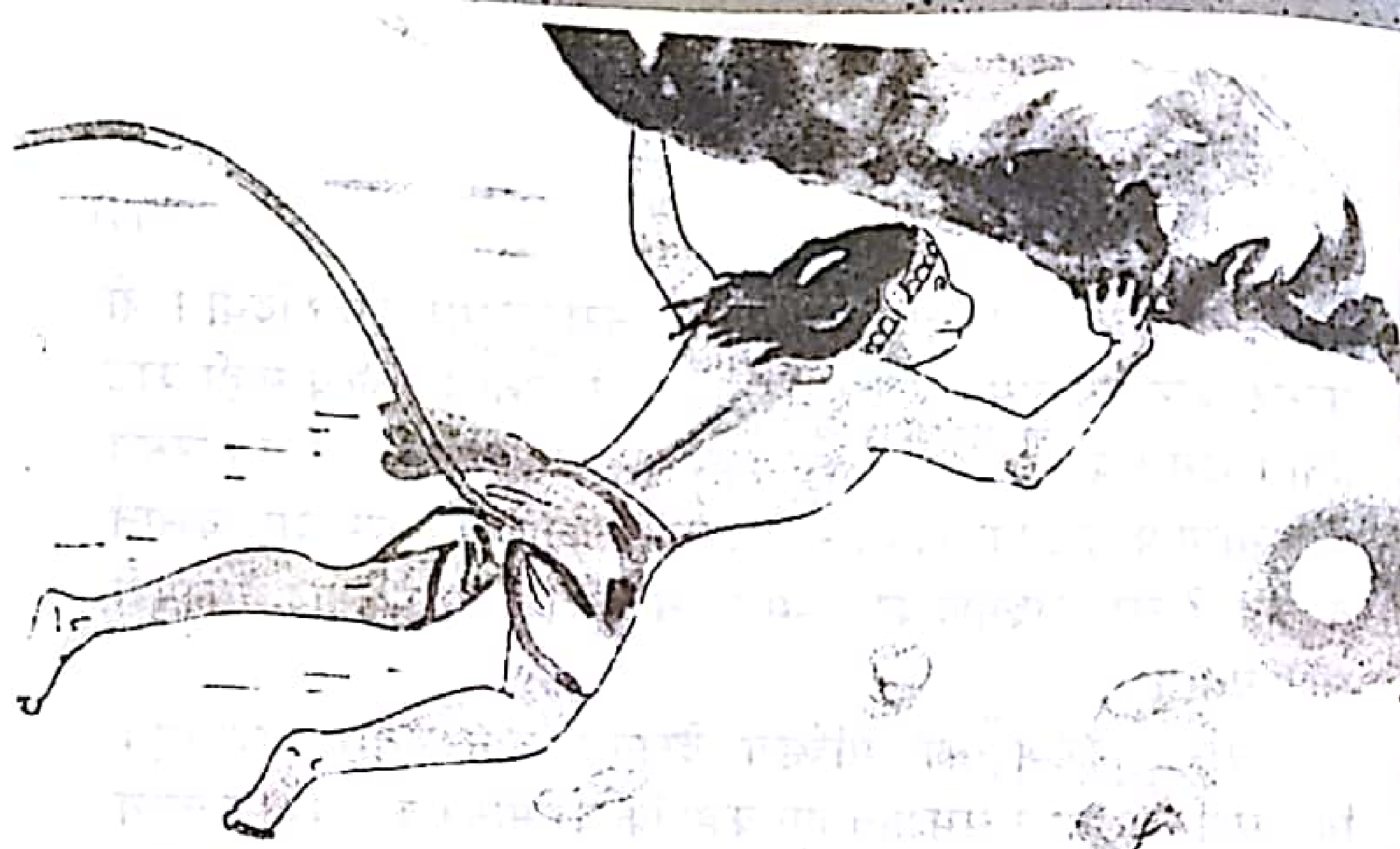
मेघनाद का बल पाकर राक्षस सेना बड़े उत्साह से बंदरों पर टूट पड़ी।

मेघनाद ने वाण वर्षा कर प्रमुख वानरों को घायल कर दिया। जो पत्थर और पेड़ उसके ऊपर बरसाए जाते, उन्हें वह बीच में ही क़ाट देता। उसने बढ़कर राम-लक्ष्मण पर वाण वर्षा आरंभ कर दी। उसने ऐसी माया फैलाई कि कोई उसे देख नहीं सकता था। राम वाण चलाते तो कहाँ? राम-लक्ष्मण को ब्रह्मास्त्र से मूर्च्छित कर मेघनाद लंकापुरी लौट गया।

राम-लक्ष्मण को मूर्च्छित देखकर वानर वीर घबराए। विभीषण ने उनको समझाते हुए कहा कि ब्रह्मास्त्र का सम्मान करने के लिए वे मूर्च्छित हो गए हैं। ठीक हो जाएँगे। जामवंत के पास जब विभीषण मशाल लेकर कुशल पूछने पहुँचे, तो जामवंत ने कहा—"पहले यह बताओ हनुमान तो जीवित हैं? अगर वे जीवित हैं तो सभी जीवित हैं। वे मरे हुओं को भी जीवित कर लेंगे।" यह सुनकर हनुमान ने उनके चरणों को प्रणाम किया।

जामवंत ने कहा, 'पवनपुत्र! तुम हिमालय पर जाओ और कैलाश शिखर से मृत संजीवनी, विशल्यकरणी, सुवर्णकरणी और संधानी औषधियाँ ले आओ। इनकी चमक से ही तुम इन्हें पहचान लोगे। तब राम-लक्ष्मण और सब वानर स्वस्थ हो जाएँगे।"

हनुमान तत्काल एक ऊँचे पर्वत पर चढ़ गए। उन्होंने अपनी पूँछ ऊपर उठाई, पीठ झुकाई, कान सिकोड़े और भुजाओं को आगे की ओर तथा जंघाओं को पीछे की ओर फैलाया और वे आकाश में उड़ चले। बात की बात में वे हिमालय के शिखर पर जा पहुँचे। उन्हें वहाँ अनेक औषधियाँ चमकती हुई दिखाई दीं। जब वे बताई हुई औषधियाँ को न पहचान सके, तो उन्होंने पर्वत शिखर को ही उठा लिया और पक्षिराज गरुड़ की गति से वे लंका आ पहुँचे। औषधियों की सुगंध से ही राम-लक्ष्मण स्वस्थ हो गए। वानर वीरों के घाव पुर गए और वे



देखा सैल न औषधि चीन्हा, सहसा कपि उपारि गिरि लीन्हा।
गहि गिरि निसि नभ धावत भयऊ, अवधपुरी ऊपर कपि गयऊ।।

ऐसे उठ बैठे मानो सोकर उठे हों। वानर सेना नए उत्साह से भर गई।

सुग्रीव की आज्ञा से वानर सेना ने रात में ही जलती हुई मशालें लेकर लंका पर धावा बोल दिया, द्वार-रक्षक प्राण लेकर भागे। बंदरों ने लंका में घुसकर रावण के हाथीखानों और घुड़सवारों में आग लगा दी। अन्न के भंडारों में भी आग लगा दी, घर-घर में आग लगा दी। आग की लपटें आकाश चूमने लगीं। उनका प्रतिबिम्ब जो समुद्र में पड़ा तो वह भी लाल हो गया। वानर सेना के सामने जो भी पड़ा, मारा गया। कंपन, प्रजंघ, यूपाक्ष और कुंभ आदि राक्षस भी मारे गए। कुंभ को मरा देखकर उसका भाई निकुंभ सुग्रीव पर टूट पड़ा। तभी हनुमान आ गए। दोनों में भयंकर युद्ध हुआ। अंत में हनुमान ने गर्दन मरोड़कर उसे भी मार डाला। मार-काट मचाकर वानर वीर अपने पड़ाव को लौट आए।

अगले दिन रावण ने खर के पुत्र मकराक्ष को युद्ध के लिए भेजा। श्रीराम और मकराक्ष का बाण युद्ध होने लगा। वे एक दूसरे के बाण

काटकर अनायास ही गिरा देते। अवसर पाकर श्रीराम ने मकराक्ष के धनुष को काट दिया और उसके रथ को नष्ट कर दिया। तब वह शूल हाथ में लेकर दौड़ा। राम ने उसे भी बाणों से काट डाला। अब वह निःशस्त्र था। घूँसा तान कर राम की ओर दौड़ा। राम ने उसकी छाती में अग्नि बाण मारा। लोहे के किवाड़ की भाँति उसका वक्ष फट गया। बची-खुची राक्षस सेना लंका में घुस गई।

अब रावण के पास एक ही वीर लंका में बचा था, वह था इन्द्र को जीतनेवाला मेघनाद। उसने मेघनाद को बुलाया और उसकी बड़ाई करके युद्ध के लिए भेजा। रणक्षेत्र में न जाकर मेघनाद अपनी यज्ञशाला में गया और होम करने लगा। देव-दानवों को प्रसन्न कर, रथ में बैठ वह युद्धभूमि में आ गया। उस समय उसके मुख पर सूर्य के समान तेज था। मंत्र शक्ति से वह अदृश्य होकर बाण बरसा रहा था। राम-लक्ष्मण का एक भी बाण उस तक न पहुँचता था। उसके पास से कोई आवाज भी न आती थी इसलिए शब्द-बेधी बाण भी उसका कुछ न बिगाड़ सकते थे। राम-लक्ष्मण घायल हो गए और वानर वीर हताश। श्रीराम के रोक देने से लक्ष्मण ने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग नहीं किया।

लंका के दुर्ग में घुसकर मेघनाद पश्चिमी द्वार से फिर निकल आया। अबकी बार उसके रथ में सीताजी बैठी दिखाई दीं। मेघनाद ने म्यान से तलवार निकाली और रथ में बैठी सीता को बाल पकड़कर नीचे घसीट लिया और तलवार से उनका सिर काट दिया। तब उसने हनुमान से कहा, ''अपनी आँखों देख लो, जिस सीता के लिए तुम लड़ रहे हो, उसको मैंने मार दिया।'' सीता वध का समाचार पाकर श्रीराम और लक्ष्मण भी रोने लगे। इतने में महात्मा विभीषण पहुँच गए। उन्हें मेघनाद की माया का पता था। उन्होंने कहा, ''रघुनंदन ! जिस

सीता का वध मेघनाद ने किया है वह माया की थीं। हमारी देवी सीत। न थीं।'' उन्होंने यह भी बताया कि इस समय मेघनाद निकुंभिला देवी के मंदिर में यज्ञ कर रहा है। यदि उसका अनुष्ठान पूरा हो गया तो वह किसी के मारे न मरेगा। हे महाबाहु! मेरे साथ लक्ष्मण को तत्काल भेजिए जिससे हम उसे यज्ञ से उठाकर युद्ध के लिए विवश कर दें।

राम की आज्ञा पाकर लक्ष्मण युद्ध के लिए तैयार हुए। उन्होंने राम के चरण छूकर कहा—''आज मैं आपकी कृपा से मेघनाद को अवश्य मार डालूँगा। कोई भी उसे न बचा सकेगा।''

वानर सेना के साथ विभीषण के पीछे लक्ष्मण चल दिए। वानर और भालू राक्षस सेना पर टूट पड़ी। लंकापुरी में हाहाकार मच गया। निकुंभिला के सामने मेघनाद से तब न रहा गया। वह यज्ञ छोड़कर युद्ध के लिए चल दिया। लक्ष्मण विभीषण के बताए हुए स्थान पर बरगद के नीचे मेघनाद के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। इतने में मेघनाद का रथ वहाँ आ गया। विभीषण को देखकर वह समझ गया कि लक्ष्मण को सारा भेद उन्हीं ने बताया है। वह विभीषण को बुरा-भला कहकर लज्जित करने लगा, ''आप मेरे पिता के सगे भाई हैं। लंका में ही जन्म और बड़े हुए। आपको समझना चाहिए था कि अपने-अपने ही होते हैं। दूसरे श्रेष्ठ होने पर भी अपने नहीं हो सकते। आप देश-द्रोही हैं। आपके अलावा लंका का भेद जाननेवाला वहाँ कौन था? आप ही लक्ष्मण को यहाँ ले आए हैं।''

लक्ष्मण और मेघनाद में युद्ध छिड़ गया। उनकी बाण वर्षा देखकर रोएँ खड़े हो जाते थे। विभीषण बराबर लक्ष्मण का उत्साह बढ़ा रहे थे। वानरों को भी उन्होंने बढ़ावा दिया और कहा, ''मैं ही इसे मारता पर मेरा भतीजा है। लक्ष्मण के हाथों आज अवश्य यह मरेगा। तुम राक्षसी सेना पर टूट पड़ो।''

लक्ष्मण ने मेघनाद का कवच काट दिया और मेघनाद ने लक्ष्मण का। तव लक्ष्मण ने उसके सारथी को मार डाला। मेघनाद रथ भी हाँकता और बाण भी छोड़ता। तब बंदर मेघनाद के रथ के घोड़ों पर चढ़ गए और घूँसों की मार से उन्हें गिरा दिया। अब वह लंका से दूसरा रथ लाकर युद्ध करने लगा। लक्ष्मण ने मेघनाद के धनुष को काट दिया। उसने दूसरा धनुष उठाया, लक्ष्मण ने उसे भी काट दिया। तब वह तीसरा धनुष लेकर युद्ध करने लगा। वह अब हिम्मत हार रहा था। इतने में विभीषण ने अपनी गदा से मेघनाद के रथ के चारों घोड़ों को मार दिया। मेघनाद ने रथ से कूदकर विभीषण पर शक्ति प्रहार किया। लक्ष्मण ने उसे बीच में ही काट दिया। अब लक्ष्मण ने विश्वामित्र के दिए ऐन्द्रास्त्र को धनुष पर रखा और कान तक खींचकर उसे छोड़ दिया। मेघनाद का सिर कटकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। राक्षस सेना भाग खड़ी हुई। लक्ष्मण को आगे कर विभीषण श्रीराम के पास पहुँचे और लक्ष्मण के पराक्रम की बात उन्हें बताई। श्रीराम ने लक्ष्मण को गले से लगा लिया और उनकी प्रशंसा की। श्रीराम बोले, 'अब हमारी विजय निश्चित समझो।'

लंका का असली योद्धा मारा गया। वानर सेना में लक्ष्मण की जय-जयकार होने लगी।

राम-रावण युद्ध

मेघनाद के मरते ही रावण की कमर टूट गई। कुछ समय तक तो वह शोक में डूबा रहा फिर वह क्रोध से लाल हो गया। उसकी शक्ल बड़ी डरावनी हो गई। कोई उसके मुँह की ओर आँख उठाकर न देख पाता था। उसने बची हुई सारी राक्षस सेना को युद्ध के लिए चलने की आज्ञा दी।-सिंह की तरह गरजता हुआ वह भी रथ पर चढ़कर निकला। लड़ाई के बाजे बजने लगे। उसके चलते ही अनेक अपशकुन हुए।

उसके घोड़ों के पैर बार-बार फिसल जाते। रथ के ऊपर गिद्ध मँडराते और उसकी बाईं भुजा बार-बार फड़कती। रावण ने इनकी कुछ भी परवाह न की। वह घमंड से यह कहता हुआ युद्ध करने लगा कि आज मैं राम से सबका बदला लूँगा।

भयंकर युद्ध छिड़ गया। बंदरों की लाशों से समर भूमि पट गई। रावण जिधर को भी मुँह करता भगदड़ मच जाती। सुषेण और सुग्रीव ने वानर सेना को सँभाला। सुग्रीव और विरुपाक्ष का युद्ध छिड़ गया। दोनों एक दूसरे पर घातक चोटें करने लगे। सुग्रीव ने विरुपाक्ष के हाथी पर चोट की। वह बैठ गया। तब विरुपाक्ष ने तलवार से सुग्रीव को घायल कर दिया। अंत में सुग्रीव के मुक्के के प्रहार से विरुपाक्ष ढेर हो गया। इसी प्रकार द्वंद्व युद्ध में उन्होंने महोदर को भी मार डाला। इसी बीच वीरवर अंगद ने महापाश्र्व का काम तमाम कर दिया।

तब रावन दस सूल चलावा, बाजि चारि महि मारि गिरावा।





स्रवत रुधिर धायउ बलवाना, प्रभु पुनि कृत धनु सर संधाना।
तीस तीर रघुवीर पबारे, भुजन्हि समेत सीस महि पारे।।

अब केवल रावण बचा। वह फन कुचले हुए नाग की भाँति फुफकारने लगा। उसके सामने बंदरों को भागते देख श्रीराम धनुष बाण लेकर आ गए। अब राम-रावण युद्ध छिड़ गया। वे एक-दूसरे के प्रहारों को बड़ी देर तक व्यर्थ करते रहे। उनके बाण जब चलते, तो रणभूमि में बिजली-सी कौंध जाती। इतने में लक्ष्मण और विभीषण भी आ गए। विभीषण ने रावण के सारथी को और घोड़ों को मार दिया। विभीषण को आगे देखकर रावण को बड़ा क्रोध आया। उसने विभीषण को मारने के लिए एक भयंकर शक्ति बाण छोड़ा। लक्ष्मण ने उसे बीच में ही काट दिया। तब उसने दूसरी शक्ति छोड़ी। उस दिव्य शक्ति को देखकर लक्ष्मण ने विभीषण को पीछे कर लिया। शक्ति लगते ही लक्ष्मण अचेत हो गए। श्रीराम पास में ही थे। उन्होंने उस शक्ति को खींचकर निकाल दिया। रावण को मौका मिल गया।

उसने श्रीराम को बुरी तरह घायल कर दिया। क्रोध के कारण राम की आँखों से आग बरसने लगी। हनुमान और सुग्रीव को लक्ष्मण की देखभाल में छोड़कर वे रावण से भिड़ गए। उन्होंने कहा, ''रावण! तेरा काल तुझे आज मेरे सामने ले आया है। आज पाप पर पुण्य की विजय होगी। अंधकार पर प्रकाश की विजय होगी। देवताओं और ऋषि-मुनियों का दुख दूर होगा। वानर मित्रों तुमने बहुत युद्ध किया। अब तुम पहाड़ की चोटियों से मेरा और रावण का युद्ध देखो। राम-रावण जैसा युद्ध फिर तुम्हें कभी देखने को न मिलेगा।''

इधर सुषेण ने हनुमान द्वारा संजीवनी बूटी मँगाकर लक्ष्मण की चिकित्सा की। बूटी सूँघते ही शरीर में घुसे हुए बाण अपने आप निकल पड़े। रक्त बहना बंद हो गया और घाव भर गए। इस समाचार से राम की चिन्ता मिटी और वे पूरे उत्साह से युद्ध करने लगे। रावण भी राम पर बाणों की अरोक वर्षा करने लगा।

रावण सुसज्जित रथ में बैठा युद्ध कर रहा था। यह देखकर देवताओं के राजा इंद्र ने अपने सारथि मातलि के हाथ अपना रथ श्रीराम के लिए भेजा। इस रथ में इंद्र का विशाल धनुष, अमोघ कवच, शक्ति बाण तथा अन्य अनेक अस्त्र-शस्त्र भी थे।

अब श्रीराम इंद्र के रथ पर चढ़कर युद्ध करने लगे। रावण ने गंधर्व अस्त्र छोड़ा। इसी नाम के अस्त्र से राम ने उसे काट दिया। तब रावण ने राक्षस-अस्त्र का प्रयोग किया, उसे राम ने गुरु-अस्त्र से काट दिया। राम पर जब उसका बस न चला तो रावण ने मातलि को घायल कर दिया। इंद्र के रथ की ध्वजा काट दी और घोड़ों पर भी बाण छोड़े फिर राम को भी घायल करके रावण गर्जने लगा। रावण का उत्साह बढ़ता जा रहा था। एक भयंकर शूल को हाथ में लेकर रावण बोला, ''राम! अब तुम नहीं बच सकते। यह शूल तुम्हारे प्राण लेकर ही

रहेगा।'' राम ने अपने बाणों से शूल को रोकने का बहुत प्रयत्न किया, पर शूल रुका नहीं। तब श्रीराम ने इंद्र द्वारा रथ में भेजी हुई शक्ति का प्रयोग किया। उससे ऐसा प्रकाश हुआ जैसा उल्का गिरने से होता है। शूल छिन्न-भिन्न हो गया। तब राम ने अपने पैने बाण उसके हृदय में और मस्तक में मारे। रक्त की धारा बह निकली। राम रावण पर और रावण राम पर बराबर बाण बरसाते रहे।

अब रावण हिम्मत हारने लगा। जब सारथि ने यह देखा तो वह रावण को लंका में लौटा ले गया। कुछ देर में जब राक्षसराज सावधान हुआ तो वह सारथि पर बहुत बिगड़ा। सारथि ने जब कारण बताया तो वह शांत हुआ और रथ के घोड़ों को बदलवा कर फिर युद्ध भूमि में आ गया। राम का आदेश पाते ही मातलि भी अपना रथ रावण के रथ के सामने ले आए। राम अब इंद्र के धनुष से युद्ध करने लगे। रथ इतने निकट आ गए थे कि घोड़ों का मुँह मिल जाते थे। श्रीराम ने बाणों से रावण के घोड़ों का मुँह मोड़ दिया। रावण ने भी राम के रथ के घोड़ों पर चोट की, पर उन पर कोई असर नहीं हुआ।

युद्ध अंत दिखाई नहीं दे रहा था। राम सोचने लगे कि जिन बाणों से मैंने सहज ही खर-दूषण को मार दिया, विराध और कबंध का वध किया, बालि को मारा और समुद्र में आग लगा दी, वे बाण रावण के सामने बेकार हो गए। मातलि ने कहा, ''मैं देख रहा हूँ कि आप रावण पर तो चोट कर ही नहीं पाते। आपकी सारी शक्ति तो रावण के प्रहारों से बचने में ही लग रही है। जब तक आप ब्रह्मास्त्र का प्रयोग न करेंगे, काम न चलेगा।'' राम को अब महर्षि अगस्त्य द्वारा दिए गए बाण की याद आई। अगस्त्य ऋषि को यह बाण ब्रह्माजी से मिला था। श्रीराम ने उस अमोघ बाण को धनुष पर चढ़ाया और कान तक खींचकर छोड़ दिया। रावण के वक्ष को चीरता हुआ वह बाण पार निकल गया और

फिर राम के तरकस में लौट आया। रावण के हाथ से धनुष छूट गया और वह रथ से पृथ्वी पर गिर पड़ा।

रावण के मरते ही देवताओं ने श्रीराम की जय-जयकार और फूलों की वर्षा की। सुग्रीव, विभीषण, लक्ष्मण, हनुमान सब टकटकी लगाकर राम के मुँह की ओर देखने लगे।

भाई का मृत शरीर लोटते देख विभीषण शोक से व्याकुल हो गए। वे रोते हुए बोले, ''भाई! आपके डर से तो काल भी काँपता था। जब गदा लेकर आप दिग्विजय को निकलते, तब पृथ्वी डगमगाने लगती थी। देवता अपने प्राण बचाने के लिए खोह, कंदराओं में छिप जाते। आज आपका शरीर धूल में लोट रहा है। राम से वैर करने का यही फल होता है। मैंने बहुत समझाया पर आपने एक न मानी। हाय! आज राक्षस वंश का नाश हो गया।''

श्रीराम ने विभीषण को समझाया, ''मित्र! रावण शोक करने योग्य नहीं। जिसने जन्म लिया है वह मरता अवश्य है। रावण को तो उत्तम मृत्यु मिली है। वह वीर था और उसे वीरगति ही मिली। तुम शोक छोड़कर उसका विधिपूर्वक अंतिम संस्कार करो।'' इतने में मंदोदरी आदि रानियाँ भी रणभूमि में आ गईं और रोने लगीं। मंदोदरी के विलाप को सुनकर सबकी आँखों में आँसू आ गए। श्रीराम ने उन्हें समझा-बूझाकर उचित दाह-संस्कार करने के लिए कहा। रानियों को लेकर विभीषण नगर में चले गए।

इधर श्रीराम ने मातलि को आदर के साथ विदा किया। सुग्रीव को श्रीराम ने हृदय से लगा लिया और कहा—''मित्र! तुम्हारी सहायता से ही इस राक्षसराज का अंत हो सका।'' वे सभी वानरों से मिले और उनसे बोले—''तुम सबने जो मेरे साथ भलाई की है, उसे मैं कभी न भूलूँगा।''

दाह-संस्कार के बाद जब विभीषण लौट आए, तो श्रीरामचन्द्र जी की आज्ञा से लक्ष्मण ने नगर में जाकर विभीषण का राजतिलक किया। विभीषण सहित सब लोग राम के पास आ गए।

अब श्रीराम ने हनुमान से कहा, ''महाराज विभीषण से अनुमति लेकर अशोक वाटिका जाओ। जनकनंदिनी को युद्ध के समाचार दो। जो कुछ वे कहें, मुझे आकर बताओ।''

हनुमान से रण के समाचार पाकर जानकी बोलीं–''मैं अब जितना जल्दी हो सके, स्वामी के दर्शन करना चाहती हूँ।''

सीताजी का समाचार पाकर श्रीराम ने विभीषण से कहा–''जानकीजी को स्नान कराकर और वस्त्राभूषणों से सजाकर ले आओ।'' विभीषण ने राजभवन में जाकर सुंदर वस्त्राभूषणों का प्रबंध किया और सीताजी का शृंगार करने के लिए चतुर स्त्रियों को अशोक वाटिका भेजा। तैयार होकर सीता हर्ष के साथ पालकी में बैठकर श्रीराम के पास आईं। श्रीराम ने विभीषण से कहा, ''मित्र ! अब मैं आज ही अयोध्या को लौट जाऊँगा। चौदह वर्ष की अवधि समाप्त हो रही है। भरत मेरे लिए दिन-रात तप कर रहा है। अगर एक भी दिन की देर हो गई, तो भरत मुझे जीवित न मिलेगा। इसलिए मेरे लौटने की तैयारी करें।'' विभीषण ने लंका में रुक कर विश्राम के लिए बहुत कहा, पर राम नहीं माने। तब विभीषण ने पुष्पक विमान मँगवाया। उसपर सफेद और पीली पताकाएँ फहरा रही थीं। खिड़कियों में रत्न जड़े थे। वह मन की गति से चलने वाला था। विभीषण बोले, ''प्रभो ! विमान आ गया, अब क्या आज्ञा है ?''

श्रीराम ने कहा कि इस विमान में अपने कोष से रत्न-आभूषण भर लाइए और उन्हें वानर सेना में बरसा दीजिए। इन्होंने प्राणों का मोह छोड़कर मेरे लिए युद्ध किया है। विभीषण ने तुरंत आज्ञा का

पालन किया। रत्न-आभूषण लूटकर वानर सेना बड़ी प्रसन्न हुई और रत्नों से खेलने लगी।

सीता और लक्ष्मण सहित श्रीराम विमान पर बैठे। सुग्रीव, विभीषण और प्रमुख वानर वीरों ने साथ चलने की प्रार्थना की। श्रीराम ने उन सबको विमान पर बैठा लिया। आज्ञा पाते ही विमान उड़ चला। वानर अपने-अपने घर चले गए।

विमान उत्तर की ओर उड़ने लगा। श्रीराम सीता को प्रमुख स्थानों के नाम बताते जाते थे, "देखो ! त्रिकूट पर्वत पर बसी यह लंका कितनी सुन्दर है। यह देखो रणभूमि है।देखो लक्ष्मण और सुग्रीव के मारे हुए कितने राक्षस पड़े हुए हैं। देखो, यह नीचे सेतु बंध है। यहीं विभीषण से मेरी मित्रता हुई थी। वह देखो, आगे किष्किंधा है। यही वानर राज सुग्रीव की राजधानी है।"

किष्किंधा को देखकर सीताजी बोलीं, "मेरी इच्छा है कि सुग्रीव की रानियाँ भी हमारे साथ अयोध्या चलें।"

विमान को नीचे उतरने की आज्ञा हुई। सुग्रीव अंत:पुर में गए। युद्ध के समाचार देकर उन्होंने तारा से सीताजी के अनुरोध की बात कही। तारा, रुमा और अन्य रानियाँ तैयार होकर विमान पर आ गईं। विमान फिर उड़ चला।

श्रीराम ने सीताजी को ऋष्यमूक पर्वत दिखाया, यहीं सुग्रीव से मेरी मित्रता हुई थी। पंपा सरोवर के किनारे राम ने शबरी का आश्रम दिखाया और कहा कि जब मैं तुम्हारे वियोग में भटक रहा था तो यहीं शबरी से मेरी भेंट हुई थी। फिर उन्होंने कबंध-वध, रावण-जटायु संग्राम के स्थान सीताजी को दिखाए—"सीता,देखो ! यह जनस्थान है। यह देखो पंचवटी में हमारी पर्णकुटी अब तक बनी हुई है। यह गोदावरी नदी की विशाल धारा ऊपर से कैसी पतली दिखाई दे रही

है।" अगस्त्य के आश्रम, सती अनुसूया के आश्रम, चित्रकूट और यमुना नदी पर उड़ता हुआ विमान प्रयाग पहुँचा। तुरंत ही श्रृंगवेरपुर दिखाई देने लगा और फिर सरयू और अयोध्या नगरी भी दीख पड़ी। राम ने कहा, "सीता अपनी नगरी को नमस्कार करो। यह मेरी मातृभूमि मुझको प्राणों से भी अधिक प्यारी है। यहाँ का हर व्यक्ति मुझे प्यारा लगता है।" सबने अयोध्या को प्रणाम किया।

राम की आज्ञा से विमान लौटकर भरद्वाज मुनि के आश्रम में उतरा। श्रीराम ने मुनि को प्रणामकर अयोध्या का कुशल समाचार पूछा। मुनि ने बताया कि अयोध्या में सब कुशल हैं। धर्मात्मा भरत आपके दर्शन के लिए व्याकुल हैं। आज रात यहीं रहें, कल अयोध्या चले जाएँ। श्रीराम ने मुनि का आतिथ्य स्वीकार कर लिया। मुनि के



प्रताप से सब वृक्ष फलों से लद गए। सबने अमृत के समान मीठे फल खाए, तब श्रीराम ने हनुमान से कहा, 'तुम अयोध्या जाकर हमारे आने की सूचना भरत को दो। रास्ते में निषादों के राजा गुह से भी मिलना। वे मेरे बड़े मित्र हैं। उनसे तुम्हें भरत का सच्चा समाचार मिल जाएगा। उसके बाद नंदिग्राम जाकर भरत से भेंट करना और उन्हें हमारे वनवास की अवधि पूरी कर लौट आने का समाचार देना, फिर अयोध्या का समाचार लेकर तुम शीघ्र लौटो।'

मनुष्य का रूप बनाकर हनुमान पहले गुह से मिले और भरत का समाचार लिया। फिर नंदिग्राम में भरत के पास पहुँचे। राम के आने का समाचार पाकर भरत फूले न समाए।

अयोध्या का समाचार लेकर हनुमान श्रीराम के पास पहुँच गए। विमान अयोध्या की ओर उड़ चला। इधर अयोध्या में श्रीराम, सीता और लक्ष्मण के स्वागत की तैयारियाँ होने लगीं। सारा नगर बंदनवार और पताकाओं से सज गया। तरह-तरह के बाजे बजने लगे। माताओं ने आरती के थाल सजाए। भरत ने राम की चरण पादुकाएँ सिर पर रख लीं। विमान की प्रतीक्षा में सब लोग नंदिग्राम में इकट्ठे हो गए।

विमान को देखते ही श्रीरामचंद्र की जय से आकाश गूँज गया। रामचंद्र जी के उतरते ही भरत ने उनके चरणों में प्रणाम किया। श्रीराम ने भरत को गले लगा लिया। शत्रुघ्न से मिलकर राम सब अयोध्यावासियों से मिले। शत्रुघ्न ने लक्ष्मण और सीताजी के चरणों में प्रणाम किया। माताओं के चरणों में प्रणामकर श्रीराम वशिष्ठ जी के आश्रम में गए और उन्हें प्रणाम कर आशीर्वाद प्राप्त किया। भरत और शत्रुघ्न विभीषण, सुग्रीव आदि सभी से मिले। पुष्पक विमान को श्रीराम ने कुबेर के पास चले जाने की आज्ञा दी।

अयोध्या में राम का राज्याभिषेक

अब राम ने राज-भवन में प्रवेश किया। सीताजी ने माताओं के चरण छुए और मनचाहा आशीर्वाद पाया। गुरु वशिष्ठ ने कहा, 'कल सवेरे ही राम का राजतिलक होगा।' भरत बराबर राम से प्रार्थना कर ही रहे थे। राजतिलक की तैयारियाँ होने लगीं। गुरु ने स्वर्णजटित सिंहासन मँगवाया। राम और सीता उस पर बैठे। सबसे पहले वशिष्ठ ने राजतिलक किया। इसके बाद अन्य ब्राह्मणों ने टीका करके आशीर्वाद दिए। माताओं ने आरती उतारी और मंगल गीत गाए। प्रजा में आनंद की लहर दौड़ गई। इंद्र ने सौ कमलों की माला राम के लिए भेजी। इस अवसर पर श्रीराम ने सुग्रीव, विभीषण, अंगद आदि को बहुमूल्य उपहार दिए। सीताजी ने अपना कंठहार उतारा। राम ने कहा, "जिस पर तुम सबसे अधिक प्रसन्न हो, उसे दे दो।" सीताजी ने यह कंठहार हनुमान को दे दिया। तारा और रुमा को सीताजी ने बहुमूल्य रत्न और वस्त्र उपहार में दिए। सिर से लगाकर हनुमान ने इसे गले में पहन लिया। सुग्रीव, विभीषण आदि कुछ दिन तक अयोध्या में रहकर अपने-अपने नगर को लौट चले।

श्रीराम ने दीर्घकाल तक अयोध्या में राज किया। उनके राज्य में प्रजा सब तरह से सुखी थी। सब लोग धर्म का पालन करते थे। किसी के साथ भेद-भाव न था। किसी को न कोई रोग हुआ और न अकाल मृत्यु। समय पर पानी बरसता था और धरती भरपूर अन्न देती थी। वृक्ष फूलों और फलों से लदे रहते थे।

रामराज्य को हम आज भी याद करते हैं और देश में उसे फिर ले आने का स्वप्न देखते हैं।

प्रश्न

1. रावण की लंका की प्रतिरक्षा करने वाले प्रमुख राक्षस वीरों के नाम बताओ।
2. अंगद को राम ने लंका किस उद्देश्य से भेजा था ?
3. पहले दिन की मुठभेड़ का संक्षेप में हाल लिखो।
4. राम और कुंभकर्ण के युद्ध का वर्णन करो।
5. लक्ष्मण और मेघनाद के अंतिम युद्ध का वर्णन करो।
6. मेघनाद ने अपने चाचा विभीषण की किन शब्दों में निन्दा की ? विभीषण और मेघनाद के विषय में उससे क्या पता लगता है ?
7. श्रीराम ने क्यों कहा—'यदि मेघनाद मारा गया तो हम युद्ध में जीत गए'—श्रीराम के इस कथन से क्या प्रकट होता है ?
8. जामवंत ने एक वार कहा था—'अगर हनुमान जिन्दा है तो हम सब जिन्दा हैं।'' उदाहरण देकर इस कथन की सत्यता सिद्ध करो।
9. राम-रावण युद्ध में राम और रावण दोनों के पराक्रम संबंधी घटनाओं का उल्लेख करो।
10. राम-रावण का-सा युद्ध फिर देखने को न मिलेगा—इस कथन की सत्यता उदाहरण देकर स्पष्ट करो।

बोध और विचार

युद्ध के परिणाम के आधार पर किन आदर्शों का बोध होता है ?



अर्थ सहित सरल श्लोक

1. सत्यमेवेश्वरो लोके, सत्ये धर्मः सदाश्रितः।
   सत्यमूलानि सर्वाणि, सत्यान्नाऽस्ति परम पद्म् ।।

   (सत्य ही संसार में ईश्वर है। धर्म भी सदा सत्य पर टिका है। सभी का मूल सत्य है। सत्य के बिना परम पद नहीं है।)

2. विक्लवो वीर्यहीनो यः स दैवमनुवर्तते।
   वीराः सम्भावितात्मानो न दैवं पर्युपासते ।।

   (जो व्याकुलचित और शक्तिहीन हैं, वे ही दैव (भाग्य) का भरोसा करते हैं। वीर पुरुष जो स्वाभिमानी होते हैं, भाग्य की उपासना नहीं करते हैं।)

3. धर्मदर्थः प्रभवति धर्मात् प्रभवेत् सुखम्।
   धर्मेण लभते सर्वं धर्मसारमिदं जगत् ।।

   (धर्म से अर्थ (धन) प्राप्त होता, धर्म से सुख का उदय होता है और धर्म से मनुष्य सब कुछ प्राप्त करता है। अतः धर्म ही इस संसार में सार है।)

4. सुलभाः पुरुषाः राजन् सततं प्रियवादिनः।
   अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः।।

   (राजन्,सदा प्रिय वचन बोलने वाले पुरुष सुलभ हैं, परंतु अप्रिय होने पर भी हितकर हो, ऐसी बात कहने और सुनने वाले दोनों ही दुर्लभ हैं।)

5. न चाति प्रणयः कार्यः कर्तव्योऽप्रणयश्च ते।
उभयं हि महादोषं तस्मादन्तरदृदग्भव।।

(न तो किसी से अधिक प्रेम करना चाहिए; न ही अधिक वैर करना चाहिए, क्योंकि दोनों में ही महान दोष हैं। बीच का रास्ता ही अच्छा होता है।)

6. मरणान्तानि वैराणि निवृत्तं नः प्रयोजनम्।
क्रियतामस्य संस्कारो ममाप्येष यथा तल।।

(मृत्यु के साथ वैरभाव भी समाप्त हो जाते हैं। हमारा प्रयोजन सिद्ध हो चुका है। अब इसका (रावण का) अंतिम संस्कार करो। यह जैसा तुम्हारा बन्धु था वैसा ही मेरा भी समझो।)

7. गुणवान् वा परजनः स्वजनो निर्गुणोऽपिवा।
निर्गुणः स्वजनः श्रेयान् यः परः पर एव सः।।

(यदि परजन (दूसरे लोग) गुणवान् हों और स्वजन (अपने लोग) गुणहीन भी हों तो गुणहीन स्वजन ही अपनाने योग्य हैं; क्योंकि दूसरे श्रेष्ठ होने पर भी अपने नहीं हो सकते।)

8. जले तरुणसूर्याभैः षट्पदाहत केसरैः।
पंकजै शोभते पंपा समन्तादभिसंवृताः।।

(जल में पड़ने वाली प्रातःकालीन सूर्य की आभा वाले, पुष्प केसर पर (रसपान करने वाले) भ्रमरों वाले कमलों से युक्त पंपा सरोवर सुशोभित हो रहा है।)

9. क्वचित् प्रकाशं क्वचिद प्रकाशं
नभः प्रकीर्णाम्बुधरं विभाति।
क्वचित् क्वचित् पर्वत संनिरुद्धं
रूपं यथा शान्त महार्णवस्य।।

(आकाश में सब ओर बादल छिटके हुए हैं। कहीं तो उन बादलों से ढक जाने के कारण आकाश दिखाई नहीं देता है और कहीं उनके फट जाने पर वह स्पष्ट दिखाई देने लगता है, जैसे जिस महासागर की तरंगमालाएँ शांत हो गई हों उसका रूप कहीं तो पर्वतमालाओं से छिप जाने के कारण नहीं दिखाई देता है कहीं पर्वतों का आवरण न होने से दिखाई देता है।)

10. विद्युत्पताका सबलाकमालाः
शैलेन्द्र कूटाकृति संनिकाशाः
गर्जन्ति मेघाः समुदीर्णनादा
मत्ता गजेन्द्रा इव संयुगस्थाः

(जैसे युद्ध-स्थान में खड़े हुए मतवाले गजराज उच्च स्वर से चिघाड़ते हैं, उसी प्रकार गिरिराज के शिखरों की-सी आकृति वाले मेघ जोर-जोर से गर्जना कर रहे हैं। चमकती हुई बिजलियाँ इन मेघ रूपी गजराजों, पताकाओं के समान फहरा (चमक) रही हैं और बगुलों की पंक्तियाँ माला के समान शोभा दे रही हैं।)

11. इमानि शुभ गंधानि पश्य लक्ष्मण सर्वशः।
नलिनानि प्रकाशन्ते जले तरुण सूर्यवत्।।

(लक्ष्मण, देखो पंपा के जल में सब ओर खिले हुए ये सुगंधित कमल प्रातःकाल के सूर्य की भाँति प्रकाशित हो रहे हैं।)

प्रमुख पात्रों का परिचय

1. **अंगद** बालि का पुत्र।
2. **अगस्त्य** एक ऋषि। यह पहले आर्य ऋषि हैं जिन्होंने विन्ध्याचल पर्वत को पार किया था और दक्षिण भारत गए थे।
3. **अहल्या** गौतम ऋषि की पत्नी, इनके साथ इन्द्र ने छल किया था। इनके पति ने इन्हें शाप दिया। श्रीराम ने इन्हें शाप से मुक्त किया। इनकी भी गणना पंचकन्याओं में की जाती है।
4. **उर्मिला** जनक की पुत्री और लक्ष्मण की पत्नी।
5. **ऋष्यश्रृंग** एक ऋषि। उन्होंने राजा दशरथ से पुत्र प्राप्ति के लिए यज्ञ कराया था।
6. **कबंध** दंडकवन का एक महाशक्तिशाली दैत्य। इंद्र के वज्र-प्रहार से उसका सिर उसके धड़ में घुस गया था। इसी कारण वह कबंध कहलाता था। उसकी बाहें बहुत लंबी थीं। उन्हीं से वह दूर-दूर तक का आहार प्राप्त करता था। वनवास के समय राम और लक्ष्मण को भी उसने पकड़ लिया था। राम तथा लक्ष्मण ने एक गड्ढा खोदकर उसको गाड़ दिया।
7. **कुंभकर्ण** रावण का भाई। राम-रावण-युद्ध में राम ने इसका वध किया था।
8. **केवट** वह नाविक जिसने श्रीराम, लक्ष्मण और सीता को गंगा पार कराई थी।

9. **कैकेयी** दशरथ की सबसे छोटी रानी–भरत की माता।

10. **कौशल्या** दशरथ की सबसे बड़ी महारानी, श्रीराम की माता।

11. **गुह** शृंगवेरपुर के निषादों का राजा। श्रीराम का वह अनन्य भक्त था। शृंगवेरपुर पहुँचने पर गुह ने ही राम का स्वागत-सत्कार किया था।

12. **गौतम** अहल्या के पति–तपस्वी ऋषि।

13. **जनक** यह विदेह भी कहे जाते हैं। यह जनकपुर के राजा थे और श्रीराम की पत्नी सीताजी के पिता थे। राजा होकर भी यह ऋषियों का-सा जीवन व्यतीत करते थे।

14. **जामवंत** यह रीछ थे। सुग्रीव की वानर सेना के साथ इनकी रीछों की सेना भी राम की सहायता करने गई थी। यह वड़े वुद्धिमान थे।

15. **ताड़का** महावलवती राक्षसी जो मिथिला के निकट वनों में रहती थी। जव विश्वामित्र राम-लक्ष्मण को अपने यज्ञ की रक्षा के लिए ले जा रहे थे तव इसने उनपर आक्रमण कर दिया था। राम ने इसका वध कर दिया।

16. **तारा** वालि की पत्नी और अंगद की माता। वह पंचकन्याओं में एक हैं और पूज्य मानी जाती हैं।

17. **त्रिजटा** रावण की अशोक वाटिका में रहने वाली एक राक्षसी। वह राम-भक्त थी और सीता के प्रति बड़ी सहानुभूति रखती थी।

18. **दशरथ** रघुवंश के प्रतापी राजा। उनकी इंद्र से भी मित्रता थी। उनका राज्य कौशल प्रदेश में था और अयोध्या उनकी राजधानी थी।

19. देवरात जनक के पूर्वज जिनके पास परशुराम ने शंकर का धनुष सुनाभ (पिनाक) रख दिया था।

20. नल सुग्रीव की सेना का वानर वीर।

21. नील सुग्रीव का सेनापति। उसे वरदान प्राप्त था उसके स्पर्श से पत्थर भी पानी पर तैरने लगते थे। उसी ने लंका जाने के लिए सेतुबंध की रचना की थी।

22. प्रहस्त रावण का सेनापति। यह राम-रावण युद्ध में मारा गया।

23. बालि पंपापुर का राजा। उसमें साठ हजार हाथियों का बल था जो उससे लड़ता था उसका आधा बल उसमें आ जाता था। इसी कारण श्रीराम ने उसे पेड़ की ओट से मारा। रावण से भी उसकी मित्रता थी।

24. भरत राजा दशरथ और कैकेयी के पुत्र।

25. मंथरा कैकेयी की मुँहलगी दासी जो कुबड़ी थी और स्वभाव से कुटिल थी।

26. मंदोदरी रावण की पत्नी थी। बालि की पत्नी तारा और मंदोदरी बहनें थीं। वह पंचकन्याओं में से थीं और पूज्य थीं।

27. मतंग ऋषि श्रीराम के समकालीन एक महान् ऋषि, बालि की राजधानी पंपापुर के निकट उनका आश्रम था। शबरी उनके प्रति बड़ी श्रद्धा रखती थी और ऋषि की अनुमति से उनके आश्रम में रहने लगी थी।

28. मांडवी जनक के भाई कुशध्वज की पुत्री और भरत की पत्नी।

29. मारीच ताड़का का पुत्र। यह विश्वामित्र के यज्ञ को विध्वंस करने आया था। स्वर्णमृग बनकर सीता-हरण में इसने रावण को सहयोग प्रदान किया और श्रीराम के द्वारा मारा गया।

30. मेघनाद रावण का पुत्र। राम-रावण युद्ध में इसका वध लक्ष्मण ने किया था। इसका नाम इंद्रजीत भी था।

31. राम राजा दशरथ के सबसे बड़े पुत्र। विष्णु के अवतार माने जाते हैं। असुरों का विनाश करने के लिए यह अवतार त्रेतायुग में हुआ था।

32. रावण ऋषि पुलस्त्य का पौत्र और विश्रवा का पुत्र। विश्रवा के तीन पत्नियाँ थीं—पुष्पोत्कटा, राका और मालिनी। रावण पुष्पोत्कटा का पुत्र था। रावण के एक भाई और एक बहन थे। भाई कुंभकर्ण था और कुंभीनसी बहन थी। विश्रवा की दूसरी पत्नी राका का पुत्र विभीषण था। इस प्रकार विभीषण रावण का सौतेला भाई था। तीसरी रानी मालिनी के तीन पुत्र थे। खर, दूषण और त्रिशारा। उनके एक पुत्री थी। उसका नाम शूर्पणखा था। रावण लंका का विश्व-विख्यात राजा और शंकर का परमभक्त था। चारों वेदों का ज्ञाता और विद्वान् पंडित था। श्रीराम द्वारा रणक्षेत्र में उसका वध हुआ।

33. रूमा सुग्रीव की पत्नी।

34. लक्ष्मण राजा दशरथ के पुत्र। राम के प्रति एकनिष्ठा। इन्होंने श्रीराम की सेवा में अपना जीवन व्यतीत किया और जीवन भर छाया की भाँति उनकी सेवा में

लगे रहे। इनका भ्रातृ-प्रेम अनुकरणीय है।

35. **वशिष्ठ** अयोध्या के सूर्यवंशी राजाओं के कुलगुरु।

36. **विभीषण** रावण का रामभक्त भाई। रावण ने इन्हें निकाल दिया था। यह राम से जाकर मिल गए और राम की सहायता की। रावण की मृत्यु के बाद यही लंका का राजा बने।

37. **विराध** दंडक वन में रहने वाला एक राक्षस। इसका राम-लक्ष्मण ने मिलकर वध किया था।

38. **विश्वामित्र** राजा गाधि के पुत्र। मूलतः राजर्षि थे पर अपनी तपस्या के बल पर ब्रह्मर्षि बने थे। श्रीराम और लक्ष्मण ने इन्हीं से उच्चकोटि की धनुर्विद्या सीखी थी।

39. **शंबासुर** एक राक्षस जिसको इंद्र ने मारा था। उस युद्ध में इंद्र की सहायता के लिए राजा दशरथ भी गए थे।

40. **शत्रुघ्न** राजा दशरथ और सुमित्रा के पुत्र। इन्होंने राम-राज स्थापित होने पर अनेक राजाओं को पराजित किया और मथुरा के राजा लवणासुर का वध किया।

41. **शरभंग** एक ऋषि। इनका आश्रम चित्रकूट के निकट था।

42. **शबरी** शबरी भगवान की भक्ति-साधना में लगी रहती थी। वह जन जाति की थी। जब राम, लक्ष्मण और सीता मतंग ऋषि के आश्रम में गए तो उन्होंने बड़े प्रेम से शबरी के आतिथ्य को स्वीकार किया।

43. **श्रुतकीर्ति** जनक के भाई कुशध्वज की पुत्री और शत्रुघ्न की पत्नी।

44. **सिंहिका** लंका के निकट समुद्र में रहने वाली राक्षसी। वह छाया को पकड़कर ही अपना आहार प्राप्त कर लेती थी।

45. **संपाती** जटायु का बड़ा भाई। एक बार उगते सूर्य को फल समझकर खाने की इच्छा से उड़ा। सूर्य के समीप पहुँचने पर उसके पंख जल गए और वह पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसने सीता की खोज में निकले वानरों को सीता का पता बताया।

46. **सीता** जनक की पुत्री जो पृथ्वी से उत्पन्न हुई कही जाती हैं।

47. **सुग्रीव** बालि का छोटा भाई जिसको बालि ने मार-पीट कर अपनी राजधानी पंपापुर से निकाल दिया था। वनवास के समय हनुमान ने उसकी श्रीराम से मित्रता कराई। उसने सीता को पुनः प्राप्त करने में श्रीराम की बड़ी सहायता की थी।

48. **सुतीक्ष्ण** अगस्त्य मुनि के शिष्य, एक ऋषि।

49. **सुबाहू** मारीच का साथी राक्षस। यह भी विश्वामित्र के यज्ञ का विध्वंस करने आया था। उसी समय श्रीराम ने इसको मार दिया था।

50. **सुमित्रा** दशरथ की मझली रानी—लक्ष्मण और शत्रुघ्न की माता।

51. **सुरसा** सर्पों की माता। सर्पों का आहार पवन है इसीलिए उसने पवनपुत्र हनुमान से कहा था कि मैं तुमको खाऊँगी।

52. **शूर्पणखा** रावण की बहन। यह विंध्या क्षेत्र में रहती थी। लक्ष्मण ने इसके नाक-कान काट दिए थे।

53. हनुमान पवन के पुत्र थे। इन्होंने राम की सुग्रीव से मित्रता करवाई थी। यह बड़े बुद्धिमान और ज्ञानी थे। इन्होंने अनेक पराक्रम के काम किए।

बोध-परीक्षा

1. राजा दशरथ के दरबार में विश्वामित्र किस उद्देश्य से आए थे ?
2. राजा जनक ने अपनी पुत्रियों का विवाह राजा दशरथ के पुत्रों के साथ क्यों किया ?
3. राम को वनवास देने में कैकेयी को सफलता क्यों मिली ?
4. वनवास के समय राम ने कौन-कौन से राक्षसों का वध किया ?
5. हनुमान ने राम के संपर्क में आने के बाद कौन-कौन से पराक्रम के कार्य किए ?
6. भरत ने किस प्रकार अपने भ्रातृ प्रेम का परिचय दिया ?
7. विभीषण के चरित्र पर संक्षेप में प्रकाश डालो।
8. रामराज की क्या विशेषताएँ थीं ? हम भारत में रामराज लाने के प्रयत्न में कहाँ तक सफल हुए हैं ?
9. रावण राम को अपना शत्रु क्यों मानने लगा था ?
10. किस आधार पर हम कह सकते हैं कि सीता भारत की आदर्श नारी थीं ?
11. राम को अपने जीवन में किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा ?
12. राम के जीवन का क्या लक्ष्य था और उस लक्ष्य को प्राप्त करने में उन्हें कहाँ तक सफलता प्राप्त हुई ?
13. राम के चरित्र की विशेषताएं विस्तार से बताओ।

शब्द-कोश

आदि-काण्ड

अट्टालिका	=	ऊँचे सर्वन, महल
पुत्रेष्टि यज्ञ	=	पुत्र की इच्छा के लिए यज्ञ
आमंत्रित	=	जिसे बुलाया गया हो
सर्वोपरि	=	सबसे ऊपर, सर्वश्रेष्ठ
आचरण	=	चाल-चलन, व्यवहार
स्फूर्ति	=	चुस्ती, फुर्ती
अदृश्य	=	दिखाई न देना, ओझल
शस्त्र	=	हाथ से लेकर चलाया जानेवाला हथियार (जैसे तलवार, खड्ग, कृपाण)
अस्त्र	=	दूर से दूर तक छोड़ा जाने वाला हथियार (जैसे—बंदूक, तोप, प्रक्षेपास्त्र)
वायव्यास्त्र	=	आँधी-तूफान उठाने वाला अस्त्र
आग्नेयास्त्र	=	आग बरसाने वाला अस्त्र
शाप	=	बंददुआ
स्तुति	=	प्रशंसा में की गई प्रांर्थना
प्रत्यंचा	=	धनुष की डोर, तांत
वज्रपात	=	आकाश से बिजली का गिरना
शीघ्रगामी	=	तेज गति वाला
चतुरंगिणी सेना	=	रथ, हाथी, घोड़े, पैदल (चार प्रकार की सेना)
यथायोग्य	=	योग्यता के अनुसार
जनवासा	=	जहाँ बरात ठहराई जाती है।

पाणिग्रहण	=	विवाह
पुत्रवधू	=	बहू (पुत्र की पत्नी)
आतिथ्य	=	स्वागत-सत्कार
अनुग्रह	=	कृपा, मेहरबानी
तत्काल	=	तुरंत
निर्भीकता	=	निडरता
हतप्रभ	=	निस्तेज, शर्मिंदा।

अयोध्या-कांड

अभिषेक	=	राजतिलक
कुटिल	=	स्वभाव से टेढ़ा
रंक	=	दरिद्र, बहुत गरीब
अपयश	=	बदनामी
अनुमति	=	इजाजत
तृण-शय्या	=	घास से बना बिस्तर, चटाई
पुरवासी	=	नगरवासी
बंधु-बांधव	=	भाईबंद, रिश्तेदार
कृतज्ञता	=	एहसान
कंद-मूल	=	जड़ों वाले खान फल (जैसे-शकरकंद, मूली, गाजर, आलू)
पर्णकुटी	=	घासपत्तों से बनी कुटिया, झोंपड़ी
शब्दवेधी	=	आवाज की दिशा में निशाना साधकर
सांत्वना	=	तसल्ली
विधिवत्	=	तरीके से, नियमानुसार
राजमद	=	राज्य-प्राप्ति की मस्ती, घमंड

अकंटक	=	कांटों से रहित, बाधा रहित
वल्कल वस्त्र	=	पत्तों व छाल के बने कपड़े
उत्तरीय	=	उपरना, दुपट्टा
कदाचित्	=	शायद, कहीं
स्वर्णजड़ित	=	सोने से जड़ा हुआ
सुसज्जित	=	सजा हुआ

अरण्य-कांड

पादुका	=	खड़ाऊँ
योजन	=	पुराने समय में दूरी का माप (लगण्य पाँच किलोमीटर)
तरकश	=	बाण रखने का वह पात्र जिसे योद्धा पीठ पर बाँधता है
निर्लज्जता	=	लज्जाहीनता, बेशर्मी
संग्राम	=	युद्ध
महाप्रबल	=	बड़ा बलशाली
हर्षित	=	प्रसन्न, खुश
कुदृष्टि	=	बुरी नजर
रुष्ट	=	नाराज
कंदरा	=	गुफा, सुरंग
दुर्गति	=	बुरी हालत

किष्किन्धा-कांड

निरर्थक	=	व्यर्थ, बेकार
मल्लयुद्ध	=	कुश्ती की लड़ाई
अंतःपुर	=	रानिवास, जहाँ स्त्रियाँ निवास करती हैं

भोग-विलास	=	ऐश-आराम
मदिरा	=	शराब

सुंदर-कांड

शतघ्नियाँ	=	तोपें
अटारी	=	ऊपरी मंजिल पर बना चौबारा
तिरस्कार	=	अपमान
वैभव	=	ठाठ
मुद्रिका	=	अंगूठी
चूड़ामणि	=	जूड़े में बाँधा जानेवाला गहना
परामर्श	=	सलाह
भार्या	=	पत्नी
सिंहनाद	=	शेर की तरह गर्जना
पराजित	=	हारा हुआ
मधु	=	शहद
विपत्ति	=	मुसीबत

युद्ध-कांड

उऋण	=	कर्ज से मुक्त
उद्यम	=	कोशिश
मुहूर्त	=	क्षण
प्रस्थान	=	चल पड़ना, यात्रा
अपशब्द	=	बुरे वचन, गाली
गुप्तचर	=	भेदिया, जासूस
मंझला	=	बीच का
सेतु	=	पुल

महा धनुर्धर	=	बड़े धनुषधारी
निरीक्षण	=	देखभाल
धृष्ट	=	ढीठ
मूर्च्छा	=	बेहोशी
नागपाश	=	नागों की जकड़न
रोष	=	नाराजगी, गुस्सा
प्रवीण	=	कुशल, चतुर
क्षत-विक्षत	=	घायल
आसक्ति	=	मोह
प्रतिबिम्ब	=	परछाई
अनायास	=	बिना कठिनाई के, सरलता से
दुर्ग	=	किला
अनुष्ठान	=	शास्त्र के अनुसार पूजा-कर्म
प्रहार	=	चोट पहुँचाने के लिए वार करना
द्वंद्व युद्ध	=	दो योद्धाओं में परस्पर लड़ाई
ध्वजा	=	झंडा
शूल	=	भाला, डंडा
दिग्विजय	=	चारों दिशाओं के राजाओं को जीतना
दाह-संस्कार	=	मृत्यु के बाद शरीर को जलाने की क्रिया
पताकाएँ	=	झंडियाँ
सरोवर	=	तालाब
बहुमूल्य	=	बहुत कीमती
उपहार	=	भेंट, तोहफा
अकाल मृत्यु	=	समय से पहले मौत

अमूल्य कथन

अयोध्या-काण्ड से

(1) भाग्य के भरोसे तो जीना कायरों का काम है। जीवन उसी का सफल है, जो अपने भरोसे जीता है।

(2) प्रभुता वाले लोग अपने सामने दूसरों की प्रशंसा सहन नहीं कर सकते।

(3) वीर पुरुष धैर्य और समझदारी से काम लेते हैं।

(4) नीतिपूर्वक प्रजा का पालन करना, प्रजा को सुखी रखना, राजा का सबसे पहला कर्त्तव्य है।

किष्किन्धा-काण्ड

(1) उपकार करना मित्र का लक्षण है और अपकार करना शत्रु का।

(2) विपत्ति में सहायता देने वाला ही सच्चा मित्र होता है।

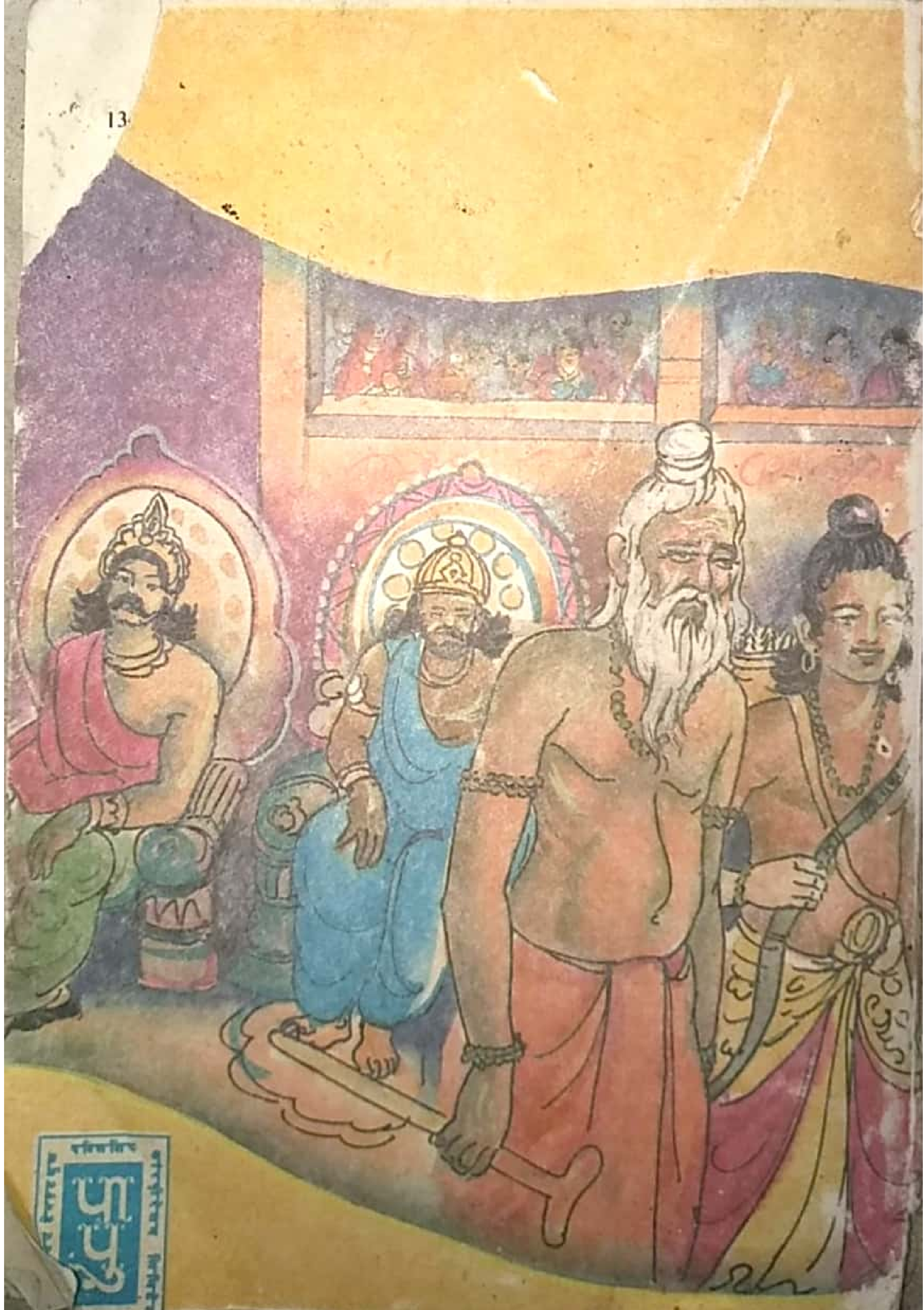
(3) मित्रता करना सहज है, पर उसे निभाना कठिन है।

युद्ध-काण्ड

(1) उद्यम से कार्य अवश्य सिद्ध होता है और शोक से काम बिगड़ जाता है।

(2) ऐसे मनुष्य का साथ नहीं करना चाहिए, जो ऊपर से तो हित की बात करता हो और भीतर-भीतर शत्रु का शुभचिंतक हो।

—•—


13
पा
पु